मानस-मणि-मालिका

(रामचरित मानस में व्यवहार, धर्म एवं नीति की शिक्षा)

संकलनकर्ता

रामाश्रय तिवारी

प्रकाशक

श्री भुवनेश्वरी विद्या-प्रतिष्ठान

भुवनेश्वरीपीठ, बिहसड़ा, मिर्जापुर (उत्तर प्रदेश)

******

वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शङ्कर रुपिणम्।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते।।
वन्दे शिवं गुरुं साक्षात् दक्षिणामूर्तिरुपिणम्।
सृष्टिस्थितिलयाः तुर्यः यस्मिन् स्वाभाविकी गतिः।।

******

प्रथम संस्करण - 2018

© श्री भुवनेश्वरी विद्या-प्रतिष्ठान

प्रकाशकः
श्री भुवनेश्वरी विद्या-प्रतिष्ठान
भुवनेश्वरीपीठ, बिहसड़ा, मिर्जापुर (उत्तर प्रदेश)

मूल्य : 25/-

।। श्री गणेशाय नमः।।

मानस–मणि–मालिका

(रामचरितमानस में व्यवहार, धर्म एवं नीति की शिक्षा)

भूमिका

"श्री भुवनेष्वरी विद्या प्रतिष्ठान" के ३६वें वार्षिकोत्सव के समय यह निश्चय किया गया कि समाज को वास्तविक धर्म कि शिक्षा देने के लिए सिद्धांत बताने के वजाय अच्छा व्यवहार सिखाना, एवं करके दिखाना अधिक लाभकर होगा। वर्तमान समय में किन बातों पर विशेष ध्यान देना है, यह समाज–सेवक समझ सकता है। आवागमन, संचार एवं सम्पर्क के साधनों की उपलब्धि, देश–काल के अनुसार संस्कृति एवं परम्पराओं के प्रवाह में परिवर्तन की गति एवं प्रभाव को देखते हुए, दुष्प्रभाव से बचने के लिए, उचित ब्यवस्था आवश्यक है। इस विषय में दो बातों पर ध्यान दिया जाना है। प्रथम मनुष्य में मानवता के लक्षण बने रहें, जिससे वह देश का आदर्श नागरिक कहा जाय तथा दूसरा भारतीय संस्कृति के मूल तत्व सुरक्षित रहें।

इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सामयिक शिक्षाएं अलग से प्रचारित की जा रही है। संत तुलसीदास के रामचरितमानस में सार्वकालिक शिक्षाओं का भंडार है। तुलसी के दार्शनिक एवं साम्प्रदायिक पक्ष को स्वीकार करना आवश्यक नहीं है। इनकी कालजयी कृति में व्यवहार व नीति की बातें सार्वजनिक एवं सार्वकालिक है। इन्हे, पूरा ग्रन्थ पढ़ते समय, ग्रहण करने में अनवधान होता है। अतः सुलभता एवं ध्यानाकर्षण के लिए उपयोगी अंशों का संग्रह करके अलग से प्रकाशित किया जा रहा है। प्रसंग एवं अर्थ के ज्ञान के लिए आवश्यक स्थानों पर संक्षिप्त प्रसंग शीर्षक दिए गए हैं। धर्म, आचरण के लिए होता है, केवल जानने और उपदेश देने मात्र से धर्मात्मा कोई नहीं बन सकता है। रामायण पढ़ने का फल तभी मिलेगा जब उसमे निहित शिक्षाओं का पालन किया जाय। भरत के चरित्र को पढ़कर गदगद होने वाला व्यक्ति यदि अपने भाई से ही बैर करता हो, तो उसके रामायण पढ़ने से क्या फायदा? अमर कीर्ति राम ने पिता को सत्यसंघ बनाने के लिए राज्य छोड़ दिया, भीष्म ने पिता की संतुष्टि के लिए आजन्म ब्रह्मचर्य का व्रत लिया, यह सब आदर्श भारतीय संस्कृति में ही मिलेगा अन्यत्र तो ठीक उल्टे उदाहरण भरे पड़े है। अतः अपने मूल से सम्बद्ध रामायण एवं महाभारत जैसे ग्रंथों का आदर इस समय बहुत अधिक उपयोगी है।

रामचरितमानस में विभिन्न वर्णों तथा आश्रमों के लिए स्वधर्म तथा नीतियां बताई गयी है। विभिन्न सम्बन्धों के निर्वाह के लिए आचार–ब्यवहार एवं शील का निरूपण मिलता है। इस ग्रन्थ में स्वधर्म का महत्व उसी तरह है जैसे गीता में है। गीता में ''स्वधर्मै निधनं श्रेयः", "स्वधर्ममपिचावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि ''आदि आदर्श अनेकधा मिलते है। मानस में भी ''निज–निज धर्म निरत श्रुति रीती, ''वर्णाश्रम निज–निज धर्म निरत वेद पथ लोग ''जैसे आदर्षों को यथास्थान स्थापित किया गया है।

भाई–भाई, पिता–पुत्र, गुरु–शिष्य, पति–पत्नी, सास–ससुर, आदि संबंधों का निर्वाह बड़ी कुशलता से समझाया गया है। शत्रु–मित्र, सेवक–स्वामी जैसे संबंधों को

भी उतना ही महत्व दिया गया है। बालक , युवा , वृद्ध, छात्र, गृहस्थ वैरवानस, यति आदि का भी स्वधर्म वर्णित है। ऐसा लगता है की संत तुलसीदास जी ने जान बूझकर सभी कोटि के लोगों के लिए निर्धारित धर्मों का उल्लेख करने के लिए संदर्भ बनाया है। राजधर्म, राजा–प्रजा का सम्बन्ध भलीभांति समझाया गया है। जासुराज प्रिय प्रजा दुखारी। सो नृप अवसि नरूक अधिकारी – यह राजधर्म का अनुशासन है। ''मुखिया मुख सम चाहिए'' यह बड़े का ब्यवहार बताया गया है। इसी तरह व्यक्ति और समाज के प्रत्येक क्षेत्र के लिए स्वधर्म मानस में वर्णित है। प्रत्येक स्तर के लोग, अपने अनुरूप शिक्षा, इस संग्रह से ग्रहण कर सकेंगें।

मानस में कथा प्रसंग को विचित्र बनाकर प्रस्तुत किया गया है। इतिहास को बहुत महत्व नहीं दिया गया है, किन्तु धर्म–शास्त्रों और नीतियों को सुरक्षित रखने का प्रयास किया गया है। बहुधा संस्कृत ग्रंथों में उल्लिखित आदर्शों का अनुवाद करके रख दिया गया है। उदाहरण के लिए रामायण में है –

''शास्त्रम् सुचिन्तितमणि परिचिन्तनीयं आराधितोऽपि नृपतिः परिसेवनीयः।
अङ्के स्थिताऽपि युवती परिरक्षणीया शास्त्रे नृपे च युवतौ हि कुतः वशित्वम्।।

इसी को मानस में लिखा है–

शास्त्र सुचिन्तित पुनि–पुनि देखिअ है, नृपति सुसेवित बस नहिं लेखिय।
राखिय नारि यदपि उर माहीं, युवती शास्त्र नृपति बस नहीं।।

इसी तरह गीता में लिखा है–

सम्भावितस्यचाकीर्तिः मरणादतिरिच्यते'

जिसे रामायण में

सम्भावित कह अपजस लाहू मरन कोटि सम दारून दाहू।।

ऐसे अनेक स्थान है जहाँ कुशलता पूर्वक अनुवाद किया गया है। प्राचीन ग्रंथों से समर्थित होने से मानस की विश्वसनीयता तथा कवि का विशाल अध्ययन स्पष्ट है। मानस में मिथ्याचार की घोर निंदा की गयी है।

''सब नृप भये जोग उपहासी।
जैसे बिनु विराग सन्यासी।।
बिना वैराग्य के सन्यास हास्यापद है।
''निर्मल मन जन सो मोहि पावा।
मोहि कपट छल–छिद्र न भावा।।

ऐसे सन्देश देकर तुलसी ने मन और आचार के शुद्धता को प्रतिष्ठित किया है। अतः मानस से संकलित धर्म और नीति श्रद्धापूर्वक आचरणीय है।

अपनी संस्कृति की रक्षा, 'धर्म के पालन, एवं अच्छे नागरिक बनने के लिए तथा जीवन के अंतिम, समय तक सुखी रहने की व्यवस्था हेतु रामचरितमानस से संकलित इन शिक्षाओं का उपयोग करके लोग लाभान्वित होंगे,' ऐसी आशा है। इससे भगवान सदाशिव सबको सद्बुद्धि देंगे। अन्य लोगो को भी अर्थ और व्यवहार समझाने वाला ब्यक्ति जीवन में कृतकृत्य होगा। संत तुलसीदास की भाषा में ही है–

कीरति भनिति भूति भलि सोई।
सुरसरि सम सब कर हित होई।।

–रामाश्रय तिवारी

बाल काण्ड

मंगलाचरणः

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।1।।
भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाःस्वान्तःस्थमीश्वरम्।।2।।

संतों का चरित्रः

साधु चरित सुभ चरित कपासू। निरस बिसद गुनमय फल जासू।।
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा। बंदनीय जेहिं जग जस पावा।।
मुद मंगलमय संत समाजू। जो जग जंगम तीरथराजू।।

सत्संग की महिमाः

मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई।।
सो जानब सतसंग प्रभाऊ। लोकहुँ वेद न आन उपाऊ।।
सतसंगति मुद मंगल मूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला।।
सठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परसि कुधातु सुहाई।।
बिधि बस सुजन कुसंगत परहीं। फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं।।
बिधि हरि हर कबि कोबिद बानी। कहत साधु महिमा सकुचानी।।
सो मो सन कहि जात न कैसें। साक बनिक मनि गुन गन जैसें।।

संत-असंत का भेदः

सुधा सुरा सम साधू असाधू। जनक एक जग जलधि अगाधू।।
भल अनभल निज निज करतूती। लहत सुजस अपलोक बिभूती।।
सुधा सुधाकर सुरसरि साधू। गरल अनल कलिमल सरि ब्याधू।।
गुन अवगुन जानत सब कोई। जो जेहि भाव नीक तेहि सोई।।

दो0 भलो भलाइहि पै लहइ लहइ निचाइहि नीचु।
सुधा सराहिअ अमरताँ गरल सराहिअ मीचु।।5।।

खल अघ अगुन साधु गुन गाहा। उभय अपार उदधि अवगाहा।।
तेहि तें कछु गुन दोष बखाने। संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने।।

दो0 जड़ चेतन गुन दोषमय बिस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि बारि बिकार।।6।।

सत्संग व कुसंग का भेदः

हानि कुसंग सुसंगति लाहू। लोकहुँ बेद बिदित सब काहू।।
साधु असाधु सदन सुक सारीं। सुमिरहिं राम देहिं गनि गारी।।

कवि की विनम्रता;

मति अति नीच ऊँचि रुचि आछी। चहिअ अमिअ जग जुरइ न छाछी।।
छमिहहिं सज्जन मोरि ढिठाई। सुनिहहिं बालबचन मन लाई।।
जौ बालक कह तोतरि बाता। सुनहिं मुदित मन पितु अरु माता।।
हँसिहहि कूर कुटिल कुबिचारी। जे पर दूषन भूषनधारी।।
निज कवित्त केहि लाग न नीका। सरस होउ अथवा अति फीका।।
जे पर भनिति सुनत हरषाही। ते बर पुरुष बहुत जग नाहीं।।
जग बहु नर सुरसरि सम भाई। जे निज बाढ़ि बढ़हिं जल पाई।।
सज्जन सुकृत सिंधु सम कोई। देखि पूर बिधु बाढ़इ जोई।।

दो0 भाग छोट अभिलाषु बड़ करउँ एक बिस्वास।
पैहहिं सुख सुनि सुजन सब खल करिहंहिं उपहास।।8।।

सुकृति के प्रचार की आशा;

मनि मानिक मुकुता छबि जैसी। अहि गिरि गज सिर सोह न तैसी।।
नृप किरीट तरुनी तनु पाई। लहहिं सकल सोभा अधिकाई।।
तैसेहिं सुकबि कबित बुध कहहीं। उपजहिं अनत अनत छबि लहहीं।।
कबि कोबिद अस हृदयँ बिचारी। गावहिं हरि जस कलि मल हारी।।
कीन्हें प्राकृत जन गुन गाना। सिर धुनि गिरा लगत पछिताना।।

वंचक भक्तः

जे जनमे कलिकाल कराला। करतब बायस बेष मराला।।
चलत कुपंथ बेद मग छाँड़े। कपट कलेवर कलि मल भाँड़ें।।
बंचक भगत कहाइ राम के। किंकर कंचन कोह काम के।।

कवि के प्रयास की सार्थकताः

जो प्रबंध बुध नहिं आदरहीं। सो श्रम बादि बाल कबि करहीं।।
कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि सम सब कहँ हित होई।।

ईश्वर की नाम-रूप-दो उपाधियाँः

नाम रूप दुइ ईस उपाधी। अकथ अनादि सुसामुझि साधी।।
को बड़ छोट कहत अपराधू। सुनि गुन भेद समुझिहहिं साधू।।
नाम रूप गति अकथ कहानी। समुझत सुखद न परति बखानी।।
अगुन सगुन बिच नाम सुसाखी। उभय प्रबोधक चतुर दुभाखी।।
एकु दारुगत देखिअ एकू। पावक सम जुग ब्रह्म बिबेकू।।
उभय अगम जुग सुगम नाम तें। कहेउँ नामु बड़ ब्रह्म राम तें।।

नाम की महिमाः

राम एक तापस तिय तारी। नाम कोटि खल कुमति सुधारी।।
राम भालु कपि कटकु बटोरा। सेतु हेतु श्रमु कीन्ह न थोरा।।
नामु लेत भवसिंधु सुखाहीं। करहु बिचारु सुजन मन माहीं।।
कहौं कहाँ लगि नाम बड़ाई। रामु न सकहिं नाम गुन गाई।।

व्यावहारिक नीतिः

जदपि मित्र प्रभु पितु गुर गेहा। जाइअ बिनु बोलेहुँ न सँदेहा।।
तदपि बिरोध मान जहँ कोई। तहाँ गएँ कल्यानु न होई।।
जद्यपि जग दारुन दुख नाना। सब तें कठिन जाति अवमाना।।

महान लोगों के दोष न देखनाः

भानु कृसानु सर्व रस खाहीं। तिन्ह कहँ मंद कहत कोउ नाहीं।।
सुभ अरु असुभ सलिल सब बहई। सुरसरि कोउ अपुनीत न कहई।।
समरथ कहुँ नहिं दोषु गोसाई। रवि पावक सुरसरि की नाई।।

माता पिता की आज्ञा का पालनः

मातु पिता गुर प्रभु कै बानी। बिनहिं बिचार करिअ सुभ जानी।।

मन को साक्षी मान कर कार्य करनाः

दो0 महादेव अवगुन भवन बिष्नु सकल गुन धाम।
जेहि कर मनु रम जाहि सन तेहि तेही सन काम।।80।।

परोपकारः

पर हित लागि तजइ जो देही। संतत संत प्रसंसहिं तेही।।

क्षमा-दयाः

सासति करि पुनि करहिं पसाऊ। नाथ प्रभुन्ह कर सहज सुभाऊ।।

जगत का मिथ्यात्वः

दो0 रजत सीप महुँ मास जिमि जथा भानु कर बारि।
जदपि मृषा तिहुँ काल सोइ भ्रम न सकइ कोउ टारि।।117।।

एहि बिधि जग हरि आश्रित रहई। जदपि असत्य देत दुख अहई।।
जौं सपनें सिर काटै कोई। बिनु जागें न दूरि दुख होई।।

धर्म की रक्षा का ईश्वरीय विधानः

जब जब होइ धरम कै हानी। बाढहिं असुर अधम अभिमानी।।
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी। सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी।।
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहि कृपानिधि सज्जन पीरा।।

तपोबल की महिमाः

तपबल तें जग सृजइ बिधाता। तपबल बिष्नु भए परित्राता।।
तपबल संभु करहिं संघारा। तप तें अगम न कछु संसारा।।
कालउ तुअ पद नाइहि सीसा। एक बिप्रकुल छाड़ि महीसा।।
तपबल विप्र सदा बरिआरा। तिन्ह के कोप न कोउ रखवारा।।
जौं विप्रन्ह बस करहु नरेसा। तौ तुअ बस बिधि विष्नु महेसा।।
चल न ब्रह्मकुल सन बरिआई। सत्य कहउँ दोउ भुजा उठाई।।

गुरु की महिमाः

राखइ गुरु जौं कोप बिधाता। गुरु बिरोध नहिं कोउ जग त्राता।।

छोटों के साथ बड़े लोगों का व्यवहारः

बड़े सनेह लघुन्ह पर करहीं। गिरि निज सिरनि सदा तृन धरहीं।।
जलधि अगाध मौलि बह फेनू। संतत धरनि धरत सिर रेनू।।

मंत्र की गोपनीयताः

जोग जुगुति तप मंत्र प्रभाऊ। फलइ तबहिं जब करिअ दुराऊ।।

शत्रु से सावधानीः

दो0 रिपु तेजसी अकेल अपि लघु करि गनिअ न ताहु।
अजहुँ देत दुख रबि ससिहि सिर अवसेषित राहु।।170।।

भाग्य का विधानः

दो0 भरद्वाज सुनु जाहि जब होइ बिधाता वाम।
धूरि मेरुसम जनक जम ताहि ब्यालसम दाम।।175।।

निशिचर का लक्षणः

बाढ़े खल बहु चोर जुआरा। जे लंपट परधन परदारा।।
मानहिं मातु पिता नहिं देवा। साधुन्ह सन करवावहिं सेवा।।
जिन्ह के यह आचरन भवानी। ते जानेहु निसिचर सब प्रानी।।

ईश्वर की व्यापकताः

हरि ब्यापक सर्बत्र समाना। प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना।।
देस काल दिसि बिदिसिहु माहीं। कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं।।
अग जगमय सब रहित बिरागी। प्रेम तें प्रभु प्रगटइ जिमि आगी।।

बालक के आचरण का आदर्शः

विद्या विनय निपुन गुन सीला। खेलहिं खेल सकल नृप लीला।।
अनुज सखा सँग भोजन करहीं। मातु पिता अज्ञा अनुसरहीं।।
जेहि बिधि सुखी होहिं पुर लोगा। करहिं कृपानिधि सोइ संजोगा।।

वेद पुरान सुनहिं मन लाई। आपु कहहिं अनुजन्ह समुझाई।।
प्रातकाल उठि कै रघुनाथा। मातु पिता गुरु नावहिं माथा।।
आयसु मांगि करहिं पुर काजा। देखि चरित हरषइ मन राजा।।

बड़ों के साथ व्यवहार व शीलः

लखन हृदयँ लालसा बिसेषी। जाइ जनकपुर आइअ देखी।।
प्रभु भय बहुरि मुनिहि सकुचाहीं। प्रगट न कहहिं मनहिं मुसुकाहीं।।
राम अनुज मन की गति जानी। भगत बछलता हिंयँ हुलसानी।।
परम बिनीत सकुचि मुसुकाई। बोले गुर अनुसासन पाई।।
नाथ लखनु पुरु देखन चहहीं। प्रभु सकोच डर प्रगट न कहहीं।।
जौं राउर आयसु मैं पावौं। नगर देखाइ तुरत लै आवौं।।
सुनि मुनीसु कह बचन सप्रीती। कस न राम तुम्ह राखहु नीती।।

गुरु से भयः

कौतुक देखि चले गुरु पाहीं। जानि बिलंबु त्रास मन माहीं।।

गुरु की सेवाः

मुनिबर सयन कीन्हि तब जाई। लगे चरन चापन दोउ भाई।।
बारबार मुनि अग्या दीन्ही। रघुबर जाइ सयन तब कीन्ही।।
चापत चरन लखनु उर लाएँ। सभय सप्रेम परम सचु पाएँ।।
पुनि पुनि प्रभु कह सोवहु ताता। पौढ़े धरि उर पद जलजाता।।

प्रातः उठने का समयः

दो0 उठे लखन निसि बिगत सुनि अरुनसिखा धुनि कान।
गुर तें पहिलेहिं जगतपति जागे रामु सुजान।।226।।

शौचाचारः

सकल सौच करि जाइ नहाए। नित्य निबाहि मुनिहि सिर नाए।।
समय जानि गुर आयसु पाई। लेन प्रसून चले दोउ भाई।।

परद्रव्य का अनुमतिपूर्वक संग्रहः

चहुँ दिसि चितइ पूँछि मालीगन। लगे लेन दल फूल मुदित मन।।

महापुरुषों का स्वभावः

रघुबंसिन्ह कर सहज सुभाऊ। मनु कुपंथ पगु धरइ न काऊ।।
मोहि अतिसय प्रतीति मन केरी। जेहिं सपनेहुँ परनारि न हेरी।।
जिन्ह कै लहहिं न रिपु रन पीठी। नहिं पावहिं परतिय मनु डीठी।।
मंगन लहहिं न जिन्ह सों नाहीं। ते नरबर थोरे जग माहीं।।

आचरण की स्पष्टताः

हृदयँ सराहत सीय लोनाई। गुर समीप गवने दोउ भाई।।
राम कहा सबु कौसिक पाहीं। सरल सुभाउ छुअत छल नाहीं।।

दिनचर्याः

करि भोजनु मुनिबर विज्ञानी। लगे कहन कछु कथा पुरानी।।
बिगत दिवसु गुरु आयसु पाई। संध्या करन चले दोउ भाई।।

विविध ज्ञानः

डिगइ न संभु सरासन कैसें। कामी बचन सती मनु जैसें।।
सब नृप भए जोगु उपहासी। जैसें बिनु बिराग संन्यासी।।

गुरु आदेश की प्रतीक्षाः

उठहु राम भंजहु भवचापा। मेटहु तात जनक परितापा।।
सुनि गुरु बचन चरन सिरु नावा। हरषु बिषादु न कछु उर आवा।।
गुर पद बंदि सहित अनुरागा। राम मुनिन्ह सन आयसु मांगा।।

तेजस्वी का प्रभावः

बोली चतुर सखी मृदु बानी। तेजवंत लघु गनिअ न रानी।।
कहँ कुंभज कहँ सिंधु अपारा। सोषेउ सुजसु सकल संसारा।।
रवि मंडल देखत लघु लागा। उदयँ तासु त्रिभुवन तम भागा।।

दो0-मंत्र परम लघु जासु बस बिधि हरि हर सुर सर्ब।
महामत्त गजराज कहुँ बस कर अंकुस खर्ब।।256।।

काम कुसुम धनु सायक लीन्हे। सकल भुवन अपने बस कीन्हे।।
देबि तजिअ संसउ अस जानी। भंजब धनुष रामु सुनु रानी।।
जेहि कें जेहि पर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलइ न कछु संहेहू।।

उचित समय पर कार्यः

तृषित बारि बिनु जो तनु त्यागा। मुएँ करइ का सुधा तड़ागा।।
का बरषा सब कृषी सुखानें। समय चुकें पुनि का पछितानें।।
गुरहि प्रनामु मनहि मन कीन्हा। अति लाघवँ उठाइ धनु लीन्हा।।

धर्म की महिमाः

जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं। जद्यपि ताहि कामना नाहीं।।
तिमि सुख संपति बिनहिं बोलाएँ। धरमसील पहिं जाहिं सुभाएँ।।

समधियों का परस्पर व्यवहारः

पुनि कह भूपति बचन सुहाए। फिरिअ महीस दूरि बड़ि आए।।
राउ बहोरि उतरि भए ठाढ़े। प्रेम प्रबाह बिलोचन बाढ़े।।
तब बिदेह बोले कर जोरी। बचन सनेह सुधाँ जनु बोरी।।
करौ कवन बिधि बिनय बनाई। महाराज मोहि दीन्हि बड़ाई।।

दो0 कोसलपति समधी सजन सनमाने सब भाँति।
मिलनि परसपर बिनय अति प्रीति न हृदयँ समाति।।340।।

******

अयोध्या काण्ड

मंगलाचरणः

यस्याङ्के च विभाति भूधरसुता देवापगा मस्तके
भाले बालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट्।
सोऽयं भूतिविभूषणः सुरवरः सर्वाधिपः सर्वदा
शर्वः सर्वगतः शिवः शशिनिभः श्रीशङ्करः पातु माम्।।1।।

महापुरुषों का आगमन-मंगलसूचकः

सेवक सदन स्वामि आगमनू। मंगल मूल अमंगल दमनू।।

विविध नीतियाँः

रहा प्रथम अब ते दिन बीते। समउ फिरें रिपु होहिं पिंरीते।।
भानु कमल कुल पोषनिहारा। बिनु जल जारि करइ सोइ छारा।।
को न कुसंगति पाइ नसाई। रहइ न नीच मतें चतुराई।।

कामातुर की दुर्दशाः

सुरपति बसइ बाहुबल जाके। नरपति सकल रहहिं रुख ताके।।
सो सुनि तिय रिस गयउ सुखाई। देखहु काम प्रताप बड़ाई।।

सत्य की रक्षा- परमधर्मः

रघुकुल रीति सदा चलि आई। प्रान जाहुँ बरु बचनु न जाई।।
नहिं असत्य सम पातक पुंज। गिरि सम होहिं कि कोटिक गुंजा।।
सत्यमूल सब सुकृत सुहाए। बेद पुरान बिदित मनु गाए।।
सिबि दधीचि बलि जो कछ भाखा। तनु धनु तजेउ बचन पनु राखा।।

द्वंदों का निवारणः

दुइ कि होइ एक समय भुआला। हँसब ठठाइ फुलाउब गाला।।
दानि कहाउब अरु कृपनाई। होइ कि खेम कुसल रौताई।।
तनु तिय तनय धामु धनु धरनी। सत्यसंध कहुँ तृन सम बरनी।।

माता-पिता की संतुष्टिः

सुनु जननी सोइ सुतु बड़भागी। जो पितु मातु बचन अनुरागी।।
तनय मातु पितु तोषनिहारा। दुर्लभ जननि सकल संसारा।।
धन्य जनमु जगतीतल तासू। पितहि प्रमोदु चरित सुनि जासू।।
चारि पदारथ करतल ताके। प्रिय पितु मातु प्रान सम जाके।।

नारि चरित्र की गूढताः

निज प्रतिबिंबु बरुकु गहि जाई। जानि न जाइ नारि गति भाई।।

दो0 काह न पावकु जारि सक का न समुद्र समाइ।
का न करै अबला प्रबल केहि जग कालु न खाइ।।47।।

परिवार का संगठनः

राखउँ सुतहि करउँ अनुरोधू। धरमु जाइ अरु बंधु बिरोधू।।
जौं केवल पितु आयसु ताता। तौ जनि जाहु जानि बड़ि माता।।
जौं पितु मातु कहेउ बन जाना। तौं कानन सत अवध समाना।।

शीलवान का व्यवहारः

मातु समीप कहत सकुचाहीं। बोले समउ समुझि मन माहीं।।
आयसु मोर सासु सेवकाई। सब बिधि भामिनि भवन भलाई।।
एहि ते अधिक धरमु नहिं दूजा। सादर सासु ससुर पद पूजा।।
कहउँ सुभायँ सपथ सत मोही। सुमुखि मातु हित राखउँ तोही।।

पतिव्रता का आदर्शः

मातु पिता भगिनी प्रिय भाई। प्रिय परिवारु सुहृद समुदाई।।
सासु ससुर गुर सजन सहाई। सुत सुंदर सुसील सुखदाई।।
जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते। पिय बिनु तियहि तरनि ते ताते।।
तनु धनु धामु धरनि पुर राजू। पति बिहीन सबु सोक समाजू।।
भोग रोग सम भूषन भारू। जमजातना सरिस संसारू।।
प्राननाथ तुम्ह बिनु जग माहीं। मो कहुँ सुखद कतहुँ कछु नाहीं।।
जिय बिनु देह नदी बिनु बारी। तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी।।

राजधर्मः

जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी। सो नृपु अवसि नरक अधिकारी।।

सेवक का आदर्शः

धरम नीति उपदेसिअ ताही। कीरति भूति सुगति प्रिय जाही।।
मन क्रम बचन चरन रत होई। कृपासिंधु परिहरिअ कि सोई।।

आदर्श सेवाः

राग रोषु इरिषा मदु मोहू। जनि सपनेहुँ इन्ह के बस होहू।।
सकल प्रकार बिकार बिहाई। मन क्रम बचन करेहु सेवकाई।।
तुम्ह कहुँ बन सब भाँति सुपासू। सँग पितु मातु रामु सिय जासू।।
जेहिं न रामु बन लहहिं कलेसू। सुत सोइ करेहु इहइ उपदेसू।।
तात किएँ प्रिय प्रेम प्रमादू। जसु जग जाइ होइ अपवादू।।

भाग्य की विचित्रताः

सुभ अरु असुभ करम अनुहारी। ईस देइ फलु हृदयँ बिचारी।।
करइ जो करम पाव फल सोई। निगम नीति असि कह सबु कोई।।

दो0 औरु करै अपराधु कोउ और पाव फल भोगु।
अति बिचित्र भगवंत गति को जग जानै जोगु।।77।।

बड़े-छोटे सब की व्यवस्था करनाः

जाचक दान मान संतोषे। मीत पुनीत प्रेम परितोषे।।
दासीं दास बोलाइ बहोरी। गुरहि सौंपि बोले कर जोरी।।
सब कै सार सँभार गोसाईं। करबि जनक जननी की नाई।।
बारहिं बार जोरि जुग पानी। कहत रामु सब सन मृदु बानी।।
सोइ सब भाँति मोर हितकारी। जेहि तें रहै भुआल सुखारी।।

दो0 मातु सकल मोरे बिरहँ जेहिं न होहिं दुख दीन।
सोइ उपाउ तुम्ह करेहु सब पुर जन परम प्रबीन।।80।।

आचार की मर्यादाः

एहि बिधि राम सबहि समुझावा। गुर पद पदुम हरषि सिरु नावा।।
गनपति गौरि गिरीसु मनाई। चले असीस पाइ रघुराई।।

गंगा की महिमाः

गंग सकल मुद मंगल मूला। सब सुख करनि हरनि सब सूला।।
सचिवहि अनुजहि प्रियहि सुनाई। बिबुध नदी महिमा अधिकाई।।
मज्जनु कीन्ह पंथ श्रम गयऊ। सुचि जलु पिअत मुदित मन भयऊ।।

कर्मफल तथा अज्ञानवश कष्टः

काहु न कोउ सुख दुख कर दाता। निज कृत करम भोग सबु भ्राता।।
जोग बियोग भोग भल मंदा। हित अनहित मध्यम भ्रम फंदा।।
जनमु मरनु जहँ लगि जग जालू। संपति बिपति करमु अरु कालू।।
धरनि धामु धनु पुर परिवारू। सरगु नरकु जहँ लगि व्यवहारू।।
देखिअ सुनिअ गुनिअ मन माहीं। मोह मूल परमारथु नाहीं।।

दो0-सपनें होइ भिखारि नृप रंकु नाकपति होइ।
जागें लाभु न हानि कछु तिमि प्रपंच जियँ जोइ।।92।।

ज्ञान का उपयोगः

अस बिचारि नहिं कीजअ रोसू। काहुहि बादि न देइअ दोसू।।
मोह निसाँ सबु सोवनिहारा। देखिअ सपन अनेक प्रकारा।।
एहिं जग जामिनि जागहिं जोगी। परमारथी प्रपंच बियोगी।।
जानिअ तबहिं जीव जग जागा। जब सब बिषय बिलास बिरागा।।

सत्य/धर्म की रक्षाः

सिबि दधीचि हरिचंद नरेसा। सहे धरम हित कोटि कलेसा।।
रंतिदेव बलि भूप सुजाना। धरमु धरेउ सहि संकट नाना।।
धरमु न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुरान बखाना।।
मैं सोइ धरमु सुलभ करि पावा। तजें तिहूँ पुर अपजसु छावा।।
संभावित कहुँ अपजस लाहू। मरन कोटि सम दारुन दाहू।।

प्रयाग की महिमाः

को कहि सकइ प्रयाग प्रभाऊ। कलुष पुंज कुंजर मृगराऊ।।
अस तीरथपति देखि सुहावा। सुख सागर रघुबर सुखु पावा।।

परस्पर आदर देना-(व्यवहार):

तब रघुबर मुनि सुजसु सुहावा। कोटि भाँति कहि सबहि सुनावा।।
सो बड सो सब गुन गन गेहू। जेहि मुनीस तुम्ह आदर देहू।।
मुनि रघुबीर परसपर नवहीं। बचन अगोचर सुखु अनुभवहीं।।

राजा का धर्म/विप्र की महिमाः

मुनि तापस जिन्ह तें दुखु लहहीं। ते नरेस बिनु पावक दहहीं।।
मंगल मूल बिप्र परितोषू। दहइ कोटि कुल भूसुर रोषू।।

भगवान का निवास स्थानः

बालमीकि हँसि कहहिं बहोरी। बानी मधुर अमिअ रस बोरी।।
सुनहु राम अब कहउँ निकेता। जहाँ बसहु सिय लखन समेता।।
जिन्ह के श्रवन समुद्र समाना। कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना।।
भरहिं निरंतर होहिं न पूरे। तिन्ह के हिय तुम्ह कहुँ गृह रूरे।।
लोचन चातक जिन्ह करि राखे। रहहिं दरस जलधर अभिलाषे।।
निदरहिं सरित सिंधु सर भारी। रूप बिंदु जल होहिं सुखारी।।
तिन्ह के हृदय सदन सुखदायक। बसहु बंधु सिय सह रघुनायक।।

दो0 जसु तुम्हार मानस बिमल हंसिनि जीहा जासु।
मुकुताफल गुन गन चुनइ राम बसहु हियँ तासु।।128।।

प्रभु प्रसाद सुचि सुभग सुबासा। सादर जासु लहइ नित नासा।।
तुम्हहि निवेदित भोजन करहीं। प्रभु प्रसाद पट भूषन धरहीं।।
सीस नवहिं सुर गुरु द्विज देखी। प्रीति सहित करि बिनय बिसेखी।।
कर नित करहिं राम पद पूजा। राम भरोस हृदयँ नहि दूजा।।
चरन राम तीरथ चलि जाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं।।
मंत्रराजु नित जपहिं तुम्हारा। पूजहिं तुम्हहि सहित परिवारा।।
तरपन होम करहिं बिधि नाना। बिप्र जेवाँइ देहिं बहु दाना।।
तुम्ह तें अधिक गुरहि जियँ जानी। सकल भायँ सेवहिं सनमानी।।

दो0 सबु करि मागहिं एक फलु राम चरन रति होउ।
तिन्ह कें मन मंदिर बसहु सिय रघुनंदन दोउ।।129।।

सदाचार का निरूपणः

काम कोह मद मान न मोहा। लोभ न छोभ न राग न द्रोहा।।
जिन्ह कें कपट दंभ नहिं माया। तिन्ह कें हृदय बसहु रघुराया।।

सब के प्रिय सब के हितकारी। दुख सुख सरिस प्रसंसा गारी।।
कहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी। जागत सोवत सरन तुम्हारी।।
तुम्हहि छाड़ि गति दूसरि नाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं।।
जननी सम जानहिं परनारी। धनु पराव बिष तें बिष भारी।।
जे हरषहिं पर संपति देखी। दुखित होहिं पर बिपति बिसेषी।।
जिन्हहि राम तुम्ह प्रानपिआरे। तिन्ह के मन सुभ सदन तुम्हारे।।

दो0 स्वामि सखा पितु मातु गुर जिन्ह के सब तुम्ह तात।
मन मंदिर तिन्ह कें बसहु सीय सहित दोउ भ्रात।।130।।

अवगुन तजि सब के गुन गहहीं। बिप्र धेनु हित संकट सहहीं।।
नीति निपुन जिन्ह कइ जग लीका। घर तुम्हार तिन्ह कर मनु नीका।।
गुन तुम्हार समुझइ निज दोसा। जेहि सब भाँति तुम्हार भरोसा।।
राम भगत प्रिय लागहिं जेही। तेहि उर बसहु सहित बैदेही।।
जाति पाँति धनु धरम बड़ाई। प्रिय परिवार सदन सुखदाई।।
सब तजि तुम्हहि रहइ उर लाई। तेहि के हृदयँ रहहु रघुराई।।

दो0 जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु तुम्ह सन सहज सनेहु।
बसहु निरंतर तासु मन सो राउर निज गेहु।।131।।

पारिवारिक जीवन का आदर्शः

सीय लखन जेहि बिधि सुखु लहहीं। सोइ रघुनाथ करहि सोइ कहहीं।।
कहहिं पुरातन कथा कहानी। सुनहिं लखनु सिय अति सुखु मानी।।
जब जब रामु अवध सुधि करहीं। तब तब बारि बिलोचन भरहीं।।
सुमिरि मातु पितु परिजन भाई। भरत सनेहु सीलु सेवकाई।।
कृपासिंधु प्रभु होहिं दुखारी। धीरजु धरहिं कुसमउ बिचारी।।
लखि सिय लखनु बिकल होइ जाहीं। जिमि पुरुषहि अनुसर परिछाहीं।।
प्रिया बंधु गति लखि रघुनंदनु। धीर कृपाल भगत उर चंदनु।।
लगे कहन कछु कथा पुनीता। सुनि सुखु लहहिं लखनु अरु सीता।।

दो0 रामु लखन सीता सहित सोहत परन निकेत।
जिमि बासव बस अमरपुर सची जयंत समेत।।141।।

जोगवहिं प्रभु सिय लखनहिं कैसें। पलक बिलोचन गोलक जैसें।।
सेवहिं लखनु सीय रघुबीरहि। जिमि अविवेकी पुरुष सरीरहि।।

जीवन का मूल्यः पश्चातापः

सोच सुमंत्र बिकल दुख दीना। धिग जीवन रघुबीर बिहीना।।
रहिहि न अंतहुँ अधम सरीरू। जसु न लहेउ बिछुरत रघुबीरू।।

भए अजस अघ भाजन प्राना। कवन हेतु नहिं करत पयाना।।
अहह मंद मनु अवसर चूका। अजहुँ न हृदय होत दुइ टूका।।
मीजि हाथ सिरु धुनि पछिताई। मनहुं कृपन धन रासि गवाँई।।
बिरिद बाँधि बर बीरु कहाई। चलेउ समर जनु सुभट पराई।।

दो0 विप्र विबेकी वेदबिद संमत साधु सुजाति।
जिमि धोखें मदपान कर सचिव सोच तेहि भाँति।।144।।

जिमि कुलीन तिय साधु सयानी। पतिदेवता करम मन बानी।।
रहै करम बस परिहरि नाहू। सचिव हृदयँ तिमि दारुन दाहु।।

धैर्य धारण हेतु ज्ञानः

सचिव धीर धरि कह मृदु बानी। महाराज तुम्ह पंडित ग्यानी।।
बीर सुधीर धुरंधर देवा। साधु समाजु सदा तुम्ह सेवा।।
जनम मरन सब दुख सुख भोगा। हानि लाभ प्रिय मिलन बियोगा।।
काल करम बस होंहिं गोसाईं। बरबस राति दिवस की नाईं।।
सुख हरषहिं जड़ दुख बिलखाहीं। दोउ सम धीर धरहिं मन माहीं।।
धीरज धरहु विवेकु बिचारी। छाड़िअ सोच सकल हितकारी।।

आश्रितों की व्यवस्थाः

सो0 गुर सन कहब सँदेसु बार बार पद पदुम गहि।
करब सोइ उपदेसु जेहिं न सोच मोहि अवधपति।।151।।

पुरजन परिजन सकल निहोरी। तात सुनाएहु बिनती मोरी।।
सोइ सब भाँति मोर हितकारी। जातें रह नरनाहु सुखारी।।
कहब सँदेसु भरत के आएँ। नीति न तजिअ राजपदु पाएँ।।
पालेहु प्रजहि करम मन बानी। सेएहु मातु सकल सम जानी।।
और निबाहेहु भायप भाई। सोच मोर जेहिं करै न काऊ।।
तात भाँति तेहि राखब राऊ। करि पितु मातु सुजन सेवकाई।।
लखन कहे कछु बचन कठोरा। बरजि राम पुनि मोहि निहोरा।।
बार बार निज सपथ देवाई। कहबि न तात लखन लरिकाई।।

पाप गणना/निर्दोष सिद्ध करने हेतु शपथः

छल बिहीन सुचि सरल सुबानी। बोले भरत जोरि जुग पानी।।
जे अघ मातु पिता सुत मारें। गाइ गोठ महिसुर पुर जारें।।
जे अघ तिय बालक बध कीन्हें। मीत महीपति माहुर दीन्हें।।
जे पातक उपपातक अहहीं। करम बचन मन भव कबि कहहीं।।
ते पातक मोहि होहुँ बिधाता। जौं यहु होइ मोर मत माता।।

दो0 जे परिहरि हरि हर चरन भजहिं भूतगन घोर।
तेहि कइ गति मोहि देउ बिधि जौं जननी मत मोर।।167।।

बेचहिं बेदु धरमु दुहि लेहीं। पिसुन पराय पाप कहि देहीं।।
कपटी कुटिल कलहप्रिय क्रोधी। बेद बिदूषक बिस्व बिरोधी।।
लोभी लंपट लोलुपचारा। जे ताकहिं परधनु परदारा।।
पावौं मैं तिन्ह के गति घोरा। जौं जननी यहु संमत मोरा।।
जे नहिं साधुसंग अनुरागे। परमारथ पथ बिमुख अभागे।।
जे न भजहिं हरि नरतनु पाई। जिन्हहि न हरि हर सुजसु सोहाई।।
तजि श्रुतिपंथु बाम पथ चलहीं। बंचक बिरचि बेष जगु छलहीं।।
तिन्ह कै गति मोहि संकर देऊ। जननी जौं यहु जानौं भेऊ।।

और्ध्वदैहिक कर्म की कर्तव्यताः

सरजु तीर रचि चिता बनाई। जनु सुरपुर सोपान सुहाई।।
एहि बिधि दाह क्रिया सब कीन्ही। बिधिवत न्हाइ तिलांजुलि दीन्ही।।
सोधि सुमृति सब बेद पुराना। कीन्ह भरत दसगात बिधाना।।
जहँ जस मुनिबर आयसु दीन्हा। तहँ तस सहस भाँति सबु कीन्हा।।
भए बिसुद्ध दिए सब दाना। धेनु बाजि गज बाहन नाना।।

दो0 सिंघासन भूषन बसन अन्न धरनि धन धाम।
दिए भरत लहि भूमिसुर भे परिपूरन काम।।170।।

पितु हित भरत कीन्हि जसि करनी। सो मुख लाख जाइ नहिं बरनी।।

शोचनीय लोगों की गणनाः

सोचिअ बिप्र जो वेद बिहीना। तजि निज धरमु बिषय लयलीना।।
सोचिअ नृपति जो नीति न जाना। जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना।।
सोचिअ बयसु कृपन धनवानू। जो न अतिथि सिव भगति सुजानू।।
सोचिअ सूद्रु बिप्र अवमानी। मुखर मानप्रिय ग्यान गुमानी।।
सोचिअ पुनि पति बंचक नारी। कुटिल कलहप्रिय इच्छाचारी।।
सोचिअ बटु निज ब्रतु परिहरई। जो नहिं गुर आयसु अनुसरई।।

दो0-सोचिअ गृही जो मोह बस करइ करम पथ त्याग।
सोचिअ जती प्रंपच रत बिगत बिबेक बिराग।।172।।

बैखानस सोइ सोचै जोगु। तपु बिहाइ जेहि भावइ भोगू।।
सोचिअ पिसुन अकारन क्रोधी। जननि जनक गुर बंधु बिरोधी।।
सब बिधि सोचिअ पर अपकारी। निज तनु पोषक निरदय भारी।।
सोचनीय सबही बिधि सोई। जो न छाड़ि छलु हरि जन होई।।

पिता की आज्ञा का पालनः

दो0-अनुचित उचित बिचारु तजि जे पालहिं पितु बैन।
ते भाजन सुख सुजस के बसहिं अमरपति ऐन।।174।।

गुर पितु मातु स्वामि हित बानी। सुनि मन मुदित करिअ भलि जानी।।
उचित कि अनुचित किएँ बिचारू। धरमु जाइ सिर पातक भारू।।

राजा की धर्मनिष्ठताः

कहउँ साँचु सब सुनि पतिआहू। चाहिअ धरमसील नरनाहू।।
मोहि राजु हठि देइहहु जबहीं। रसा रसातल जाइहि तबहीं।।

सांसारिक संबंधों की निःसारताः

दो0-जरउ सो संपति सदन सुखु सुहृद मातु पितु भाइ।
सनमुख होत जो राम पद करै न सहस सहाइ।।185।।

परोपकार हेतु उद्यमः

सनमुख लोह भरत सन लेऊँ। जिअत न सुरसरि उतरन देऊँ।।
समर मरनु पुनि सुरसरि तीरा। राम काजु छनभंगु सरीरा।।
भरत भाइ नृपु मै जन नीचू। बड़ें भाग असि पाइअ मीचू।।
स्वामि काज करिहउँ रन रारी। जस धवलिहउँ भुवन दस चारी।।
तजउँ प्रान रघुनाथ निहोरें। दुहूँ हाथ मुद मोदक मोरें।।

जीवन की सार्थकताः

साधु समाज न जाकर लेखा। राम भगत महुँ जासु न रेखा।।
जायँ जिअत जग सो महि भारू। जननी जौबन बिटप कुठारू।।

वृद्ध की आवश्यकताः

बूढ़ु एकु कह सगुन बिचारी। भरतहि मिलिअ न होइहि रारी।।

प्रयाग महिमाः

देखत स्यामल धवल हलोरे। पुलकि सरीर भरत कर जोरे।।
सकल काम प्रद तीरथराऊ। वेद विदित जग प्रगट प्रभाऊ।।
मागउँ भीख त्यागि निज धरमू। आरत काह न करइ कुकरमू।।
मुनि समाजु अरु तीरथराजू। साँचिहुँ सपथ अघाइ अकाजू।।
एहिं थल जौं किछु कहिअ बनाई। एहि सम अधिक न अघ अधमाई।।

विवेक का प्रयोगः

तात प्रताप प्रभाउ तुम्हारा। को कहि सकइ को जाननिहारा।।
अनुचित उचित काजु किछु होऊ। समुझि करिअ भल कह सबु कोऊ।।
सहसा करि पाछैं पछिताहीं। कहहिं वेद बुध ते बुध नाहीं।।
सुनि सुर बचन लखन सकुचाने। राम सीयँ सादर सनमाने।।

राजमद और उसका त्यागः

कही तात तुम्ह नीति सुहाई। सब तें कठिन राजमदु भाई।।
जो अचवँत नृप मातहिं तेई। नाहिन साधुसभा जेहिं सेई।।
सुनहु लखन भल भरत सरीसा। बिधि प्रपंच महँ सुना न दीसा।।
दो0-भरतहि होइ न राजमदु बिधि हरि हर पद पाइ।।
कबहुँ कि काँजी सीकरनि छीरसिंधु बिनसाइ।।231।।
जे गुर पद अंबुज अनुरागी। ते लोकहुँ बेदहुँ बड़भागी।।

भ्राताओं का प्रेमः

मैं जानउँ निज नाथ सुभाऊ। अपराधिहु पर कोह न काऊ।।
मो पर कृपा सनेह बिसेखी। खेलत खुनिस न कबहूँ देखी।।
सिसुपन ते परिहरेउँ न संगू। कबहुँ न कीन्ह मोर मन भंगू।।
मैं प्रभु कृपा रीति जियँ जोही। हारेहुँ खेल जितावहिं मोही।।
दो0-महूँ सनेह सकोच बस सनमुख कही न बैन।
दरसन तृपित न आजु लगि प्रेम पिआसे नैन।।260।।

कार्य-कारण सम्बन्धः

फरइ कि कोदव बालि सुसाली। मुकुता प्रसव कि संबुक ताली।।

दैव गतिः

तात जाँय जियँ करहु गलानी। ईस अधीन जीव गति जानी।।

सहज ज्ञानः

मुनि गन निकट बिहग मृग जाहीं। बाधक बधिक बिलोकि पराहीं।।
हित अनहित पसु पच्छिउ जाना। मानुष तनु गुन ग्यान निधाना।।

सेवा का रहस्यः

सहज सनेहँ स्वामि सेवकाई। स्वारथ छल फल चारि बिहाई।।
अग्या सम न सुसाहिब सेवा। सो प्रसादु जन पावै देवा।।

आचार शिक्षाः राजधर्मः

जानि तुम्हहि मृदु कहउँ कठोरा। कुसमयँ तात न अनुचित मोरा।।
होहिं कुठायँ सुबंधु सुहाए। ओड़िअहिं हाथ असनि के घाए।।
दो0-सेवक कर पद नयन सो मुख सो साहिबु होइ।
तुलसी प्रीति कि रीति सुनि सुकबि सराहहिं सोइ।।306।।
गुरु पितु मातु स्वामि सिख पालें। चलेहुँ कुमग पग परहिं न खालें।।
तुम्ह मुनि मातु सचिव सिख मानी। पालेहु पुहुमि प्रजा रजधानी।।
दो0-मुखिआ मुखु सो चाहिऐ खान पान कहुँ एक।
पालइ पोषइ सकल अँग तुलसी सहित बिबेक।।315।।
राजधरम सरबसु एतनोई। जिमि मन माहँ मनोरथ गोई।।

******

अरण्य काण्ड

मंगलाचरणः

मूलं धर्मतरोर्विवेकजलधेः पूर्णेन्दुमानन्ददं
वैराग्याम्बुजभास्करं ह्यघघनध्वान्तापहं तापहम्।
मोहाम्भोधरपूगपाटनविधौ स्वः सम्भवं शङ्करं
वन्दे ब्रह्मकुलं कलंकशमनं श्रीरामभूपप्रियम।।1।।

भगवान के विमुख होने का फलः

मातु मृत्यु पितु समन समाना। सुधा होइ बिष सुनु हरिजाना।।
मित्र करइ सत रिपु कै करनी। ता कहँ बिबुधनदी बैतरनी।।
सब जगु तेहि अनलहु ते ताता। जो रघुबीर बिमुख सुनु भ्राता।।

क्षमादानः

सो0 कीन्ह मोह बस द्रोह जद्यपि तेहि कर बध उचित।
प्रभु छाड़ेउ करि छोह को कृपाल रघुबीर सम।

नारि धर्मः

अनुसुइया के पद गहि सीता। मिली बहोरि सुसील बिनीता।।
कह रिषिबधू सरस मृदु बानी। नारिधर्म कछु ब्याज बखानी।।
मातु पिता भ्राता हितकारी। मितप्रद सब सुनु राजकुमारी।।
अमित दानि भर्ता बयदेही। अधम सो नारि जो सेव न तेही।।
धीरज धर्म मित्र अरु नारी। आपद काल परिखिअहिं चारी।।
बृद्ध रोगबस जड़ धनहीना। अंध बधिर क्रोधी अति दीना।।
ऐसेहु पति कर किएँ अपमाना। नारि पाव जमपुर दुख नाना।।
एकइ धर्म एक ब्रत नेमा। कायँ बचन मन पति पद प्रेमा।।
जग पतिब्रता चारि बिधि अहहीं। बेद पुरान संत सब कहहीं।।
उत्तम के अस बस मन माहीं। सपनेहुँ आन पुरुष जग नाहीं।।
मध्यम परपति देखइ कैसें। भ्राता पिता पुत्र निज जैंसें।।
धर्म बिचारि समुझि कुल रहई। सो निकृष्ट त्रिय श्रुति अस कहई।।
बिनु अवसर भय तें रह जोई। जानेहु अधम नारि जग सोई।।
पति बंचक परपति रति करई। रौरव नरक कल्प सत परई।।
छन सुख लागि जनम सत कोटि। दुख न समुझ तेहि सम को खोटी।।
बिनु श्रम नारि परम गति लहई। पतिब्रत धर्म छाड़ि छल गहई।।
पति प्रतिकुल जनम जहँ जाई। बिधवा होई पाई तरुनाई।।

सो0 सहज अपावनि नारि पति सेवत सुभ गति लहइ।
जसु गावत श्रुति चारि अजहु तुलसिका हरिहि प्रिय।

ज्ञान दर्शनः

ग्यान मान जहँ एकउ नाहीं। देख ब्रह्म समान सब माही।।
कहिअ तात सो परम बिरागी। तृन सम सिद्धि तीनि गुन त्यागी।।
दो0 माया ईस न आपु कहुँ जान कहिअ सो जीव।
बंध मोच्छप्रद सर्बपर माया प्रेरक सीव।

भक्तिदर्शनः

धर्म तें बिरति जोग तें ग्याना। ग्यान मोच्छप्रद बेद बखाना।।
जातें बेगि द्रवउँ मैं भाई। सो मम भगति भगत सुखदाई।।
भगति कि साधन कहउँ बखानी। सुगम पंथ मोहि पावहिं प्रानी।।
प्रथमहिं बिप्र चरन अति प्रीती। निज निज कर्म निरत श्रुति रीती।।
एहि कर फल पुनि बिषय बिरागा। तब मम धर्म उपज अनुरागा।।
श्रवनादिक नव भक्ति दृढ़ाहीं। मम लीला रति अति मन माहीं।।
संत चरन पंकज अति प्रेमा। मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा।।
गुरु पितु मातु बंधु पति देवा। सब मोहि कहँ जाने दृढ़ सेवा।।
मम गुन गावत पुलक सरीरा। गदगद गिरा नयन बह नीरा।।
काम आदि मद दंभ न जाकें। तात निरंतर बस मैं ताकें।।
दो0 बचन कर्म मन मोरि गति भजनु करहिं निःकाम।।
तिन्ह के हृदय कमल महुँ करउँ सदा बिश्राम।

विविध नीतियाँः

प्रभु समर्थ कोसलपुर राजा। जो कछु करहिं उनहि सब छाजा।।
सेवक सुख चह मान भिखारी। ब्यसनी धन सुभ गति व्यभिचारी।।
लोभी जसु चह चार गुमानी। नभ दुहि दूध चहत ए प्रानी।।
राज नीति बिनु धन बिनु धर्मा। हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा।।
बिद्या बिनु बिबेक उपजाएँ। श्रम फल पढ़े किएँ अरु पाएँ।।
संग ते जती कुमंत्र ते राजा। मान ते ग्यान पान तें लाजा।।
प्रीति प्रनय बिनु मद ते गुनी। नासहि बेगि नीति अस सुनी।।
सो0 रिपु रुज पावक पाप प्रभु अहि गनिअ न छोट करि।
अस कहि बिबिध बिलाप करि लागी रोदन करन।।21(क)।।

व्यवहार शिक्षाः

तब मारीच हृदयँ अनुमाना। नवहि बिरोधें नहिं कल्याना।।
सस्त्री मर्मी प्रभु सठ धनी। वैद बंदि कबि भानस गुनी।।

कुमार्ग का फलः

जाकें डर सुर असुर डेराहीं। निसि न नीद दिन अन्न न खाहीं।।
सो दससीस स्वान की नाई। इत उत चितइ चला भड़िहाई।।
इमि कुपंथ पग देत खगेसा। रह न तेज बुधि बल लवलेसा।।

परोपकारी की महत्ताः

जल भरि नयन कहहिँ रघुराई। तात कर्म निज ते गतिं पाई।।
परहित बस जिन्ह के मन माहीँ। तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीँ।।

विप्र महिमाः

सुनु गंधर्ब कहउँ मै तोही। मोहि न सोहाइ ब्रह्मकुल द्रोही।।

दो0 मन क्रम बचन कपट तजि जो कर भूसुर सेव।
मोहि समेत बिरंचि सिव बस ताकें सब देव।।33।।

सापत ताड़त परुष कहंता। बिप्र पूज्य अस गावहिं संता।।

नवधा भक्तिः

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा। दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।।

दो0 गुर पद पंकज सेवा तीसरि भगति अमान।
चौथि भगति मम गुन गन करइ कपट तजि गान।।35।।

मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा। पंचम भजन सो बेद प्रकासा।।
छठ दम सील बिरति बहु करमा। निरत निरंतर सज्जन धरमा।।
सातवँ सम मोहि मय जग देखा। मोतें संत अधिक करि लेखा।।
आठवँ जथालाभ संतोषा। सपनेहुँ नहिं देखइ परदोषा।।
नवम सरल सब सन छलहीना। मम भरोस हियँ हरष न दीना।।
नव महुँ एकउ जिन्ह के होई। नारि पुरुष सचराचर कोई।।
सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरे। सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरें।।

स्त्री की रक्षाः

नारि सहित सब खग मृग बृंदा। मानहुँ मोरि करत हहिं निंदा।।
हमहि देखि मृग निकर पराहीं। मृगीं कहहिं तुम्ह कहँ भय नाहीं।।
तुम्ह आनंद करहु मृग जाए। कंचन मृग खोजन ए आए।।
संग लाइ करिनीं करि लेहीं। मानहुँ मोहि सिखावनु देहीं।।
सास्त्र सुचिंतित पुनि पुनि देखिअ। भूप सुसेवित बस नहिं लेखिअ।।
राखिअ नारि जदपि उर माहीं। जुबती सास्त्र नृपति बस नाहीं।।

काम-प्रतापः

लछिमन देखत काम अनीका। रहहिं धीर तिन्ह कै जग लीका।।
एहि कें एक परम बल नारी। तेहि तें उबर सुभट सोइ भारी।।

दो0 तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ।
मुनि बिग्यान धाम मन करहिं निमिष महुँ छोभ।।38(क)।।

ज्ञानी और भक्तः

मोरे प्रौढ़ तनय सम ग्यानी। बालक सुत सम दास अमानी।।
गनहि मोर बल निज बल ताही। दुहु कहँ काम क्रोध रिपु आही।।
यह बिचारि पंडित मोहि भजहीं। पाएहुँ ग्यान भगति नहिं तजहीं।।

दो0 काम क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह कै धारि।
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद मायारूपी नारि।।43।।

नारी का प्रभावः

सुनि मुनि कह पुरान श्रुति संता। मोह बिपिन कहुँ नारि बसंता।।
जप तप नेम जलाश्रय झारी। होइ ग्रीषम सोषइ सब नारी।।
काम क्रोध मद मत्सर भेका। इन्हहि हरषप्रद बरषा एका।।
दुर्बासना कुमुद समुदाई। तिन्ह कहँ सरद सदा सुखदाई।।
धर्म सकल सरसीरुह बृंदा। होइ हिम तिन्हहि दहइ सुख मंदा।।
पुनि ममता जवास बहुताई। पलुहइ नारि सिसिर रितु पाई।।
पाप उलूक निकर सुखकारी। नारि निबिड़ रजनी अँधिआरी।।
बुधि बल सील सत्य सब मीना। बनसी सम त्रिय कहहिं प्रबीना।।

सन्त के लक्षणः

सुनु मुनि संतन्ह के गुन कहऊँ। जिन्ह ते मैं उन्ह कें बस रहऊँ।।
षट बिकार जित अनघ अकामा। अचल अकिंचन सुचि सुखधामा।।
अमितबोध अनीह मितभोगी। सत्यसार कवि कोबिद जोगी।।
सावधान मानद मदहीना। धीर धर्म गति परम प्रबीना।।

दो0 गुनागार संसार दुख रहित विगत संदेह।।
तजि मम चरन सरोज प्रिय तिन्ह कहुँ देह न गेह।।45।।

निज गुन श्रवन सुनत सकुचाहीं। पर गुन सुनत अधिक हरषाहीं।।
सम सीतल नहिं त्यागहिं नीती। सरल सुभाउ सबहिं सन प्रीती।।
जप तप ब्रत दम संजम नेमा। गुरु गोबिंद बिप्र पद प्रेमा।।
श्रद्धा छमा मयत्री दाया। मुदिता मम पद प्रीति अमाया।।
विरति विवेक विनय बिग्याना। बोध जथारथ वेद पुराना।।
दंभ मान मद करहिं न काऊ। भूलि न देहिं कुमारग पाऊ।।
गावहिं सुनहिं सदा मम लीला। हेतु रहित परहित रत सीला।।
मुनि सुनु साधुन्ह के गुन जेते। कहि न सकहिं सारद श्रुति तेते।।

नारी के संग से सावधानीः

दीप सिखा सम जुबति तन मन जनि होसि पतंग।
भजहि राम तजि काम मद करहि सदा सतसंग।।46(ख)।।

******

किष्किन्धा काण्ड

मंगलाचरणः

ब्रह्माम्भोधिसमुद्भवं कलिमलप्रध्वंसनं चाव्ययं
श्रीमच्छम्भुमुखेन्दुसुन्दरवरे संशोभितं सर्वदा।
संसारामयभेषजं सुखकरं श्रीजानकीजीवनं
धन्यास्ते कृतिनः पिबन्ति सततं श्रीरामनामामृतम्।।2।।

सो0 मुक्ति जन्म महि जानि ग्यान खानि अघ हानि कर।
जहँ बस संभु भवानि सो कासी सेइअ कस न।।

चौ0 जरत सकल सुर बृंद बिषम गरल जेहिं पान किय।
तेहि न भजसि मन मंद को कृपाल संकर सरिस।।

मित्र धर्मः

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहि बिलोकत पातक भारी।।
निज दुख गिरि सम रज करि जाना। मित्र क दुख रज मेरु समाना।।
जिन्ह कें असि मति सहज न आई। ते सठ कत हठि करत मिताई।।
कुपथ निवारि सुपंथ चलावा। गुन प्रगटे अवगुनन्हि दुरावा।।
देत लेत मन संक न धरई। बल अनुमान सदा हित करई।।
बिपति काल कर सतगुन नेहा। श्रुति कह संत मित्र गुन एहा।।
आगें कह मृदु बचन बनाई। पाछें अनहित मन कुटिलाई।।
जा कर चित अहि गति सम भाई। अस कुमित्र परिहरेहि भलाई।।
सेवक सठ नृप कृपन कुनारी। कपटी मित्र सूल सम चारी।।

धर्म निरूपणः

अनुज बधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी।।
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधें कछु पाप न होई।।

विविध नीति-धर्मः

बरषा काल मेघ नभ छाए। गरजत लागत परम सुहाए।।
दामिनि दमक रही न घन माहीं। खल कै प्रीति जथा थिर नाहीं।।
बरषहिं जलद भूमि निअराएँ। जथा नवहिं बुध बिद्या पाएँ।।
बूँद अघात सहहिं गिरि कैंसें। खल के बचन संत सह जैसें।।
छुद्र नदीं भरि चलीं उतराई। जस थोरेहुँ धन खल इतराई।।
भूमि परत भा ढाबर पानी। जनु जीवहि माया लपटानी।।

समिटि समिटि जल भरहिं तलावा। जिमि सदगुन सज्जन पहिं आवा।।
सरिता जल जलनिधि महुँ जाई। होई अचल जिमि जिव हरि पाई।।

दो0 हरित भूमि तृन संकुल समुझि परहिं नहिं पंथ।
जिमि पाखंड विबाद तें लुप्त होहिं सदग्रंथ।।14।।

दादुर धुनि चहुं दिसा सुहाई। बेद पढ़हिं जनु बटु समुदाई।।
नव पल्लव भए बिटप अनेका। साधक मन जस मिलें बिबेका।।
अर्क जबास पात बिनु भयऊ। जस सुराज खल उद्यम गयऊ।।
खोजत कतहुँ मिलइ नहिं धूरी। करइ क्रोध जिमि धरमहि दूरी।।
ससि संपन्न सोह महि कैसी। उपकारी कै संपति जैसी।।
निसि तम घन खद्योत बिराजा। जनु दंभिन्ह कर मिला समाजा।।
महावृष्टि चलि फूटि किआरीं। जिमि सुतंत्र भएँ बिगरहिं नारीं।।
कृषी निरावहिं चतुर किसाना। जिमि बुध तजहिं मोह मद माना।।
देखिअत चक्रबाक खग नाहीं। कलिहि पाइ जिमि धर्म पराहीं।।
ऊषर बरषइ तृन नहिं जामा। जिमि हरिजन हियँ उपज न कामा।।
बिबिध जंतु संकुल महि भ्राजा। प्रजा बाढ़ जिमि पाइ सुराजा।।
जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना। जिमि इंद्रिय गन उपजें ग्याना।।

दो0 कबहुँ प्रबल बह मारुत जहँ तहँ मेघ बिलाहिं।
जिमि कपूत के उपजें कुल सद्धर्म नसाहिं।।15(क)।।
कबहुँ दिवस महँ निबिड़ तम कबहुँक प्रगट पतंग।
बिनसइ उपजइ ग्यान जिमि पाइ कुसंग सुसंग।।15(ख)।।

बरषा बिगत सरद रितु आई। लछिमन देखहु परम सुहाई।।
फूलें कास सकल महि छाई। जनु बरषाँ कृत प्रगट बुढ़ाई।।
उदित अगस्ति पंथ जल सोषा। जिमि लोभहि सोषइ संतोषा।।
सरिता सर निर्मल जल सोहा। संत हृदय जस गत मद मोहा।।
रस-रस सूख सरित सर पानी। ममता त्याग करहिं जिमि ग्यानी।।
जानि सरद रितु खंजन आए। पाइ समय जिमि सुकृत सुहाए।।
पंक न रेनु सोह असि धरनी। नीति निपुन नृप कै जसि करनी।।
जल संकोच बिकल भइँ मीना। अबुध कुटुंबी जिमि धनहीना।।
बिनु धन निर्मल सोह अकासा। हरिजन इव परिहरि सब आसा।।
कहुँ कहुँ बृष्टि सारदी थोरी। कोउ एक पाव भगति जिमि मोरी।।

दो0 चले हरषि तजि नगर नृप तापस बनिक भिखारि।
जिमि हरिभगत पाइ श्रम तजहि आश्रमी चारि।।16।।

सुखी मीन जे नीर अगाधा। जिमि हरि सरन न एकउ बाधा।।
फूलें कमल सोह सर कैसा। निर्गुन ब्रम्ह सगुन भएँ जैसा।।
गुंजत मधुकर मुखर अनूपा। सुंदर खग रव नाना रूपा।।
चक्रबाक मन दुख निसि पैखी। जिमि दुर्जन पर संपति देखी।।
चातक रटत तृषा अति ओही। जिमि सुख लहइ न संकरद्रोही।।
सरदातप निसि ससि अपहरई। संत दरस जिमि पातक टरई।।
देखि इंदु चकोर समुदाई। चितवतहिं जिमि हरिजन हरि पाई।।
मसक दंस बीते हिम त्रासा। जिमि द्विज द्रोह किएँ कुल नासा।।

दो0 भूमि जीव संकुल रहे गए सरद रितु पाइ।
सदगुर मिले जाहिं जिमि संसय भ्रम समुदाइ।।17।।

विषय बंधनः

नाथ बिषय सम मद कछु नाहीं। मुनि मन मोह करइ छन माहीं।।
बिषय बस्य सुर नर मुनि स्वामी। मैं पावँर पसु कपि अति कामी।।
नारि नयन सर जाहि न लागा। घोर क्रोध तम निसि जो जागा।।
लोभ फांस जेहिं गर न बँधाया। सो नर तुम्ह समान रघुराया।।
यह गुन साधन तें नहिं होई। तुम्हरी कृपाँ पाव कोइ कोई।।

भव भेषज रघुनाथजसु सुनहिं जे नर अरु नारि।।
तिन्ह कर सकल मनोरथ सिद्ध करहिं त्रिसिरारि।।

******

सुन्दर काण्ड

मंगलाचरणः

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि।।3।।

सत्संग में विश्वाशः

दो0 तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग।।4।।

लंका निसिचर निकर निवासा। इहाँ कहाँ सज्जन कर बासा।।
एहि सन हठि करिहउँ पहिचानी। साधु ते होइ न कारज हानी।।

राजनीतिः

दो0 सचिव बैद गुर तीनि जौं प्रिय बोलहिं भय आस।
राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगिहीं नास।।37।।

कामुकता की निंदाः

जो आपन चाहै कल्याना। सुजसु सुमति सुभ गति सुख नाना।।
सो परनारि लिलार गोसाईं। तजउ चउथि के चंद कि नाई।।

साधु के अपमान का फलः

साधु अवग्या तुरत भवानी। कर कल्यान अखिल कै हानी।।
रावन जबहिं बिभीषन त्यागा। भयउ बिभव बिनु तबहिं अभागा।।

शरणागत की रक्षाः

दो0 सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि।
ते नर पावँर पापमय तिन्हहि बिलोकत हानि।।43।।

कोटि बिप्र बध लागहिं जाहू। आएँ सरन तजउँ नहिं ताहू।।

कुसंग-वर्जनः

बरु भल बास नरक कर ताता। दुष्ट संग जनि देइ बिधाता।।

पौरुष का महत्त्वः

नाथ दैव कर कवन भरोसा। सोषिअ सिंधु करिअ मन रोसा।।
कादर मन कहुँ एक अधारा। दैव दैव आलसी पुकारा।।

साम के बाद दंडनीतिः

दो0 बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीन दिन बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति।।57।।

नीतियाँः

सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीती। सहज कृपन सन सुंदर नीती।।
ममता रत सन ग्यान कहानी। अति लोभी सन बिरति बखानी।।
क्रोधिहि सम कामिहि हरि कथा। ऊसर बीज बएँ फल जथा।।

सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान।।
सादरसुनहिं ते तरहिं भव सिन्धु बिना जलजान।।

******

लंका काण्ड

मंगलाचरणः

यो ददाति सतां शम्भुः कैवल्यमपि दुर्लभम्।
खलानां दण्डकृद्योऽसौ शङ्करः शं तनोतु मे।।3।।

शिव महिमाः

लिंग थापि बिधिवत करि पूजा। सिव समान प्रिय मोहि न दूजा।।
सिव द्रोही मम भगत कहावा। सो नर सपनेहुँ मोहि न पावा।।
दो0 संकर प्रिय मम द्रोही सिव द्रोही मम दास।
ते नर करहि कलप भरि धोर नरक महुँ बास।।2।।

नीति वचनः

नाथ बयरु कीजे ताही सों। बुधि बल सकिअ जीति जाही सों।।
तासु बिरोध न कीजिअ नाथा। काल करम जिव जाकें हाथा।।
प्रिय बानी जे सुनहिं जे कहहीं। ऐसे नर निकाय जग अहहीं।।
बचन परम हित सुनत कठोरे। सुनहिं जे कहहिं ते नर प्रभु थोरे।।

नारी का स्वभावः

नारि सुभाउ सत्य कवि कहहीं। अवगुन आठ सदा उर रहहीं।।
साहस अनृत चपलता माया। भय अबिबेक असौच अदाया।।

मूर्खता की असाध्यताः

सो0 फूलह फरइ न बेत जदपि सुधा बरषहिं जलद।
मूरुख हृदयँ न चेत जौं गुर मिलहिं बिरंचि सम।।16(ख)।।

नीतिः

प्रीति बिरोध समान सन करिअ नीति असि आहि।
जौं मृगपति बध मेडुकन्हि भल कि कहइ कोउ ताहि।।23(ग)।।

जीवन्मृत लोगः

कौल कामबस कृपिन बिमूढ़ा। अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा।।
सदा रोगबस संतत क्रोधी। विष्नु बिमूख श्रुति संत बिरोधी।।
तनु पोषक निंदक अघ खानी। जीवन सव सम चौदह प्रानी।।

नीतिवचनः

काल दंड गहि काहु न मारा। हरइ धर्म बल बुद्धि बिचारा।।
साम दान अरु दंड बिभेदा। नृप उर बसहिं नाथ कह बेदा।।
नीति धर्म के चरन सुहाए। अस जियँ जानि नाथ पहिं आए।।

धर्म-रथः

सुनहु सखा कह कृपानिधाना। जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना।।
सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका।।
बल बिबेक दम परहित घोरे। छमा कृपा समता रजु जोरे।।
ईस भजनु सारथी सुजाना। बिरति चर्म संतोष कृपाना।।
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंड़ा। बर बिग्यान कठिन कोदंडा।।
अमल अचल मन त्रोन समाना। सम जम नियम सिलीमुख नाना।।
कवच अभेद बिप्र गुर पूजा। एहि सम बिजय उपाय न दूजा।।
सखा धर्ममय अस रथ जाके। जीत न कहँ न कतहुँ रिपु ताके।।

दो0 महा अजय संसार रिपु जीति सकइ सो बीर।
जाकें अस रथ होइ दृढ़ सुनहु सखा मतिधीर।।80(क)।।

त्रिविध मनुष्यः

छं0 जनि जल्पना करि सुजसु नासहि नीति सुनहि करहि छमा
संसार महँ पूरुष त्रिबिध पाटल रसाल पनस समा।।
एक सुमनप्रद एक सुमन फल एक फलइ केवल लागहीं।
एक कहहिं कहहिं करहिं अपर एक करहिं कहत न बागहीं।।

परद्रोह का परिणामः

बिफल होहिं सब उद्यम ताके। जिमि परद्रोह निरत मनसा के।।

भाई का प्रेमः

दो0 तोर कोस गृह मोर सब सत्य बचन सुनु भ्रात।
भरत दसा सुमिरत मोहि निमिष कल्प सम जात।।116(क)।।
तापस बेष गात कृस जपत निरंतर मोहि।
देखौं बेगि सो जतनु करु सखा निहोरउँ तोहि।।116(ख)।।

******

उत्तर काण्ड

मंगलाचरणः

कुन्दइन्दुदरगौरसुन्दरं अम्बिकापतिमभीष्टसिद्धिदम्।
कारुणीककलकञ्जलोचनं नौमि शंकरमनंगमोचनम्।।3।।

रामराज्यः

राम राज बैंठें त्रेलोका। हरषित भए गए सब सोका।।
बयरु न कर काहू सन कोई। राम प्रताप बिषमता खोई।।

दो0 बरनाश्रम निज निज धरम निरत वेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहिं भय सोक न रोग।।20।।

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।।
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।।
चारिउ चरन धर्म जग माहीं। पूरि रहा सपनेहुँ अघ नाहीं।।
राम भगति रत नर अरु नारी। सकल परम गति के अधिकारी।।
अल्पमृत्यु नहिं कवनिउ पीरा। सब सुंदर सब बिरुज सरीरा।।
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना। नहिं कोउ अबुध न लच्छन हीना।।
सब निर्दंभ धर्मरत पुनी। नर अरु नारि चतुर सब गुनी।।
सब गुनग्य पंडित सब ग्यानी। सब कृतग्य नहिं कपट सयानी।।
राम राज कर सुख संपदा। बरनि न सकइ फनीस सारदा।।
सब उदार सब पर उपकारी। बिप्र चरन सेवक नर नारी।।
एकनारि ब्रत रत सब झारी। ते मन बच क्रम पति हितकारी।।

दो0 दंड जतिन्ह कर भेद जहँ नर्तक नृत्य समाज।
जीतहु मनहि सुनिअ अस रामचंद्र कें राज।।22।।

नारी का कर्तव्यः

पति अनुकूल सदा रह सीता। सोभा खानि सुसील बिनीता।।
जानति कृपासिंधु प्रभुताई। सेवति चरन कमल मन लाई।।
जद्यपि गृहँ सेवक सेवकिनी। बिपुल सदा सेवा बिधि गुनी।।
निज कर गृह परिचरजा करई। रामचंद्र आयसु अनुसरई।।
जेहि बिधि कृपासिंधु सुख मानइ। सोइ कर श्री सेवा बिधि जानइ।।
कौसल्यादि सासु गृह माहीं। सेवइ सबन्हि मान मद नाहीं।।

भाई का स्नेहः

सेवहिं सानकूल सब भाई। राम चरन रति अति अधिकाई।।
राम करहिं भ्रातन्ह पर प्रीती। नाना भाँति सिखावहिं नीती।।
हरषित रहहिं नगर के लोगा। करहिं सकल सुर दुर्लभ भोगा।।

सदाचारः

बेद पुरान बसिष्ट बखानहिं। सुनहिं राम जद्यपि सब जानहिं।।
अनुजन्ह संजुत भोजन करहीं। देखि सकल जननीं सुख भरहीं।।

स्वच्छता की शिक्षाः

दो0 उत्तर दिसि सरजू बहइ निर्मल जल गंभीर।
बाँधे घाट मनोहर स्वल्प पंक नहिं तीर।।28।।

दूरि फराक रुचिर सो घाटा। जहँ जल पिअहिं बाजि गज ठाटा।।
पनिघट परम मनोहर नाना। तहाँ न पुरुष करहिं अस्नाना।।

रामराज्य में आचारः

जब ते राम प्रताप खगेसा। उदित भयउ अति प्रबल दिनेसा।।
पूरि प्रकास रहेउ तिहुँ लोका। बहुतेन्ह सुख बहुतन मन सोका।।
जिन्हहि सोक ते कहउँ बखानी। प्रथम अविद्या निसा नसानी।।
अघ उलूक जहँ तहाँ लुकाने। काम क्रोध कैरव सकुचाने।।
विबिध कर्म गुन काल सुभाऊ। ए चकोर सुख लहहिं न काऊ।।
मत्सर मान मोह मद चोरा। इन्ह कर हुनर न कवनिहुँ ओरा।।
धरम तड़ाग ग्यान बिग्याना। ए पंकज बिकसे बिधि नाना।।
सुख संतोष बिराग विबेका। बिगत सोक ए कोक अनेका।।

दो0 यह प्रताप रबि जाकें उर जब करइ प्रकास।
पछिले बाढ़हिं प्रथम जे कहे ते पावहिं नास।।31।।

संत के लक्षणः

संतन्ह के लच्छन सुनु भ्राता। अगनित श्रुति पुरान बिख्याता।।
संत असंतन्हि कै असि करनी। जिमि कुठार चंदन आचरनी।।
काटइ परसु मलय सुनु भाई। निज गुन देइ सुगंध बसाई।।

दो0 ताते सुर सीसन्ह चढ़त जग बल्लभ श्रीखंड।
अनल दाहि पीटत घनहिं परसु बदन यह दंड।।37।।

बिषय अलंपट सील गुनाकर। पर दुख दुख सुख सुख देखे पर।।
सम अभूतरिपु बिमद बिरागी। लोभामरष हरष भय त्यागी।।
कोमलचित दीनन्ह पर दाया। मन बच क्रम मम भगति अमाया।।
सबहि मानप्रद आपु अमानी। भरत प्रान सम मम ते प्रानी।।
बिगत काम मम नाम परायन। सांति बिरति बिनती मुदितायन।।
सीतलता सरलता मयत्री। द्विज पद प्रीति धर्म जनयत्री।।
ए सब लच्छन बसहिं जासु उर। जानेहु तात संत संतत फुर।।
सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं। परुष बचन कबहूँ नहिं बोलहिं।।

दो0 निंदा अस्तुति उभय सम ममता मम पद कंज।
ते सज्जन मम प्रानप्रिय गुन मंदिर सुख पुंज।।38।।

दुष्ट का स्वभावः

सुनहु असंतन्ह केर सुभाऊ। भूलेहुँ संगति करिअ न काऊ।।
तिन्ह कर संग सदा दुखदाई। जिमि कपिलहि घालइ हरहाई।।
खलन्ह हृदयँ अति ताप बिसेषी। जरहिं सदा पर संपति देखी।।
जहँ कहुँ निंदा सुनहिं पराई। हरषहिं मनहुँ परी निधि पाई।।
काम क्रोध मद लोभ परायन। निर्दय कपटी कुटिल मलायन।।
बयरु अकारन सब काहू सों। जो कर हित अनहित ताहू सों।।
झूठइ लेना झूठइ देना। झूठइ भोजन झूठ चबेना।।
बोलहिं मधुर बचन जिमि मोरा। खाइ महा अहि हृदय कठोरा।।

दो0 पर द्रोही पर दार रत पर धन पर अपबाद।
ते नर पाँवर पापमय देह धरें मनुजाद।।39।।

लोभइ ओढ़न लोभइ डासन। सिस्नोदर पर जमपुर त्रासन।।
काहू की जौं सुनहिं बड़ाई। स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई।।
जब काहू कै देखहिं बिपती। सुखी भए मानहुँ जग नृपती।।
स्वारथ रत परिवार बिरोधी। लंपट काम लोभ अति क्रोधी।।
मातु पिता गुर बिप्र न मानहिं। आपु गए अरु घालहिं आनहिं।।
करहिं मोह बस द्रोह परावा। संत संग हरि कथा न भावा।।
अवगुन सिंधु मंदमति कामी। बेद बिदूषक परधन स्वामी।।
बिप्र द्रोह पर द्रोह बिसेषा। दंभ कपट जियँ धरें सुबेषा।।

दो0 ऐसे अधम मनुज खल कृतजुग त्रेता नाहिं।
द्वापर कछुक बृंद बहु होइहहिं कलिजुग माहिं।।40।।

धर्म का निर्णयः

पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।।
निर्नय सकल पुरान बेद कर। कहेउँ तात जानहिं कोबिद नर।।
नर सरीर धरि जे पर पीरा। करहिं ते सहहिं महा भव भीरा।।
करहिं मोह बस नर अघ नाना। स्वारथ रत परलोक नसाना।।
कालरूप तिन्ह कहँ मैं भ्राता। सुभ अरु असुभ कर्म फल दाता।।

मनुष्य शरीर का मूल्यः

बड़ें भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथिन्ह गावा।।
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा। पाइ न जेहिं परलोक सँवारा।।

दो0 सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताइ।
कालहि कर्महि ईस्वरहि मिथ्या दोष लगाइ।।43।।

एहि तन कर फल बिषय न भाई। स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई।।
नर तनु पाइ बिषयँ मन देहीं। पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं।।
ताहि कबहुँ भल कहइ न कोई। गुंजा ग्रहइ परस मनि खोई।।
आकर चारि लच्छ चौरासी। जोनि भ्रमत यह जिव अबिनासी।।
फिरत सदा माया कर प्रेरा। काल कर्म सुभाव गुन घेरा।।
कबहुँक करि करुना नर देही। देत ईस बिनु हेतु सनेही।।
नर तनु भव बारिधि कहुँ बेरो। सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो।।
करनधार सदगुर दृढ़ नावा। दुर्लभ साज सुलभ करि पावा।।

दो0 जो न तरै भव सागर नर समाज अस पाइ।
सो कृत निंदक मंदमति आत्माहन गति जाइ।।44।।

निर्णयात्मक रहस्यः

भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी। बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी।।
पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न संता। सतसंगति संसृति कर अंता।।
पुन्य एक जग महुँ नहिं दूजा। मन क्रम बचन बिप्र पद पूजा।।
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा। जो तजि कपटु करइ द्विज सेवा।।

दो0 औरउ एक गुपुत मत सबहि कहउँ कर जोरि।
संकर भजन बिना नर भगति न पावइ मोरि।।45।।

जो अति आतप ब्याकुल होई। तरु छाया सुख जानइ सोई।।

भवसागर की गंभीरताः

नारद भव बिरंचि सनकादी। जे मुनिनायक आतमवादी।।
मोह न अंध कीन्ह केहि केही। को जग काम नचाव न जेही।।
तृस्नाँ केहि न कीन्ह बौराहा। केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा।।

दो0-ग्यानी तापस सूर कबि कोबिद गुन आगार।
केहि कै लोभ बिडंबना कीन्हि न एहिं संसार।।70(क)।।
श्री मद बक्र न कीन्ह केहि प्रभुता बधिर न काहि।
मृगलोचनि के नैन सर को अस लाग न जाहि।।70(ख)।।

गुन कृत सन्निपात नहिं केही। कोउ न मान मद तजेउ निबेही।।
जोबन ज्वर केहि नहिं बलकावा। ममता केहि कर जस न नसावा।।
मच्छर काहि कलंक न लावा। काहि न सोक समीर डोलावा।।
चिंता साँपिनि को नहिं खाया। को जग जाहि न ब्यापी माया।।

कीट मनोरथ दारु सरीरा। जेहि न लाग घुन को अस धीरा।।
सुत बित लोक ईषना तीनी। केहि के मति इन्ह कृत न मलीनी।।
यह सब माया कर परिवारा। प्रबल अमिति को बरनै पारा।।
सिव चतुरानन जाहि डेराहीं। अपर जीव केहि लेखे माहीं।।

दो0 ब्यापि रहेउ संसार महुँ माया कटक प्रचंड।
सेनापति कामादि भट दंभ कपट पाषंड।।71(क)।।
सो दासी रघुबीर कै समुझें मिथ्या सोपि।
छूट न राम कृपा बिनु नाथ कहउँ पद रोपि।।71(ख)।।

अहंकारी को ईश्वरीय दंडः

सुनहु राम कर सहज सुभाऊ। जन अभिमान न राखहिं काऊ।।
संसृत मूल सूलप्रद नाना। सकल सोक दायक अभिमाना।।
ताते करहिं कृपानिधि दूरी। सेवक पर ममता अति भूरी।।
जिमि सिसु तन ब्रन होइ गोसाई। मातु चिराव कठिन की नाईं।।

दो0 जदपि प्रथम दुख पावइ रोवइ बाल अधीर।
ब्याधि नास हित जननी गनति न सो सिसु पीर।।74(क)।।
तिमि रघुपति निज दासकर हरहिं मान हित लागि।
तुलसिदास ऐसे प्रभुहि कस न भजहु भ्रम त्यागि।।74(ख)।।

ज्ञान की साधनाः

राम कृपा बिनु सुनु खगराई। जानि न जाइ राम प्रभुताई।।
जानें बिनु न होइ परतीती। बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती।।
प्रीति बिना नहिं भगति दिढ़ाई। जिमि खगपति जल कै चिकनाई।।

सो0 बिनु गुर होइ कि ग्यान ग्यान कि होइ बिराग बिनु।
गावहिं बेद पुरान सुख कि लहिअ हरि भगति बिनु।।89(क)।।
कोउ बिश्राम कि पाव तात सहज संतोष बिनु।
चलै कि जल बिनु नाव कोटि जतन पचि पचि मरिअ।।89(ख)।।

बिनु संतोष न काम नसाहीं। काम अछत सुख सपनेहुँ नाहीं।।
राम भजन बिनु मिटहिं कि कामा। थल बिहीन तरु कबहुँ कि जामा।।
बिनु बिग्यान कि समता आवइ। कोउ अवकास कि नभ बिनु पावइ।।
श्रद्धा बिना धर्म नहिं होई। बिनु महि गंध कि पावइ कोई।।
बिनु तप तेज कि कर बिस्तारा। जल बिनु रस कि होइ संसारा।।
सील कि मिल बिनु बुध सेवकाई। जिमि बिनु तेज न रूप गोसाई।।
निज सुख बिनु मन होइ कि थीरा। परस कि होइ बिहीन समीरा।।
कवनिउ सिद्धि कि बिनु बिस्वासा। बिनु हरि भजन न भव भय नासा।।

दो0 बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रवहिं न रामु।
राम कृपा बिनु सपनेहुँ जीव न लह बिश्रामु।।90(क)।।

परमहित साधनाः

सो0 पन्नगारि असि नीति श्रुति संमत सज्जन कहहिं।
अति नीचहु सन प्रीति करिअ जानि निज परम हित।।95(क)।।
पाट कीट तें होइ तेहि तें पाटंबर रुचिर।
कृमि पालइ सबु कोइ परम अपावन प्रान सम।।95(ख)।।

कलि प्रभावः

दो0 कलिमल ग्रसे धर्म सब लुप्त भए सदग्रंथ।
दंभिन्ह निज मति कल्पि करि प्रगट किए बहु पंथ।।97(क)।।
भए लोग सब मोहबस लोभ ग्रसे सुभ कर्म।
सुनु हरिजान ग्यान निधि कहउँ कछुक कलिधर्म।।97(ख)।।

बरन धर्म नहिं आश्रम चारी। श्रुति बिरोध रत सब नर नारी।।
द्विज श्रुति बेचक भूप प्रजासन। कोउ नहिं मान निगम अनुसासन।।
मारग सोइ जा कहुँ जोइ भावा। पंडित सोइ जो गाल बजावा।।
मिथ्यारंभ दंभ रत जोई। ता कहुँ संत कहइ सब कोई।।
सोइ सयान जो परधन हारी। जो कर दंभ सो बड़ आचारी।।
जौ कह झूँठ मसखरी जाना। कलिजुग सोइ गुनवंत बखाना।।
निराचार जो श्रुति पथ त्यागी। कलिजुग सोइ ग्यानी वैरागी।।
जाकें नख अरु जटा बिसाला। सोइ तापस प्रसिद्ध कलिकाला।।

दो0 असुभ बेष भूषन धरें भच्छाभच्छ जे खाहिं।
तेइ जोगी तेइ सिद्ध नर पूज्य ते कलिजुग माहिं।।98(क)।।
सो0 जे अपकारी चार तिन्ह कर गौरव मान्य तेइ।
मन क्रम बचन लबार तेइ बकता कलिकाल महुँ।।98(ख)।।

नारि बिबस नर सकल गोसाई। नाचहिं नट मर्कट की नाई।।
सूद्र द्विजन्ह उपदेसहिं ग्याना। मेलि जनेऊ लेहिं कुदाना।।
सब नर काम लोभ रत क्रोधी। देव बिप्र श्रुति संत बिरोधी।।
गुन मंदिर सुंदर पति त्यागी। भजहिं नारि पर पुरुष अभागी।।
सौभागिनीं बिभूषन हीना। बिधवन्ह के सिंगार नबीना।।
गुर सिष बधिर अंध का लेखा। एक न सुनइ एक नहिं देखा।।
हरइ सिष्य धन सोक न हरई। सो गुर घोर नरक महुँ परई।।
मातु पिता बालकन्हि बोलाबहिं। उदर भरै सोइ धर्म सिखावहिं।।

दो0 ब्रह्म ग्यान बिनु नारि नर कहहिं न दूसरि बात।
कौड़ी लागि लोभ बस करहिं बिप्र गुर घात।।99(क)।।
बादहिं सूद्र द्विजन्ह सन हम तुम्ह ते कछु घाटि।..
जानइ ब्रह्म सो विप्रवर आँखि देखावहिं डाटि।।99(ख)।।

पर त्रिय लंपट कपट सयाने। मोह द्रोह ममता लपटाने।।
तेइ अभेदवादी ग्यानी नर। देखा में चरित्र कलिजुग कर।।
आपु गए अरु तिन्हहू घालहिं। जे कहुँ सत मारग प्रतिपालहिं।।
कल्प कल्प भरि एक एक नरका। परहिं जे दूषहिं श्रुति करि तरका।।
जे बरनाधम तेलि कुम्हारा। स्वपच किरात कोल कलवारा।।
नारि मुई गृह संपति नासी। मूड़ मुड़ाइ होहिं सन्यासी।।
ते बिप्रन्ह सन आपु पुजावहिं। उभय लोक निज हाथ नसावहिं।।
बिप्र निरच्छर लोलुप कामी। निराचार सठ बृषली स्वामी।।
सूद्र करहिं जप तप ब्रत नाना। बैठि बरासन कहहिं पुराना।।
सब नर कल्पित करहिं अचारा। जाइ न बरनि अनीति अपारा।।

दो0 भए बरन संकर सकल भिन्नसेतु सब लोग।
करहिं पाप पावहिं दुख भय रुज सोक बियोग।।100(क)।।
श्रुति संमत हरि भक्ति पथ संजुत बिरति बिबेक।
तेहि न चलहिं नर मोह बस कल्पहिं पंथ अनेक।।100(ख)।।

दो0 सुनु खगेस कलि कपट हठ दंभ द्वेष पाषंड।
मान मोह मारादि मद ब्यापि रहे ब्रह्मंड।।101(क)।।
तामस धर्म करहिं नर जप तप ब्रत मख दान।
देव न बरषहिं धरनीं बए न जामहिं धान।।101(ख)।।

दो0 सुनु ब्यालारि कराल कलि मल अवगुन आगार।
गुनउँ बहुत कलिजुग कर बिनु प्रयास निस्तार।।102(क)।।
कृतजुग त्रेता द्वापर पूजा मख अरु जोग।
जो गति होइ सो कलि हरि नाम ते पावहिं लोग।।102(ख)।।

युगधर्मः

कृतजुग सब जोगी बिग्यानी। करि हरि ध्यान तरहिं भव प्रानी।।
त्रेताँ बिबिध जग्य नर करहीं। प्रभुहि समर्पि कर्म भव तरहीं।।
द्वापर करि रघुपति पद पूजा। नर भव तरहिं उपाय न दूजा।।
कलिजुग केवल हरि गुन गाहा। गावत नर पावहिं भव थाहा।।

प्रगट चारि पद धर्म के कलिल महुँ एक प्रधान।
जेन केन बिधि दीन्हें दान करइ कल्यान।।103(ख)।।
सुद्ध सत्व समता बिग्याना। कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना।।
सत्व बहुत रज कछु रति कर्मा। सब बिधि सुख त्रेता कर धर्मा।।
बहु रज स्वल्प सत्व कछु तामस। द्वापर धर्म हरष भय मानस।।
तामस बहुत रजोगुन थोरा। कलि प्रभाव बिरोध चहुँ ओरा।।
बुध जुग धर्म जानि मन माहीं। तजि अधर्म रति धर्म कराहीं।।

स्वाभाव का प्रभावः

अधम जाति मैं बिद्या पाएँ। भयउँ जथा अहि दूध पिआएँ।।
मानी कुटिल कुभाग्य कुजाती। गुर कर द्रोह करउँ दिनु राती।।
अति दयाल गुर स्वल्प न क्रोधा। पुनि पुनि मोहि सिखाव सुबोधा।।
जेहि ते नीच बड़ाई पावा। सो प्रथमहिं हठि ताहि नसावा।।
धूम अनल संभव सुनु भाई। तेहि बुझाव घन पदवी पाई।।
रज मग परी निरादर रहई। सब कर पद प्रहार नित सहई।।
मरुत उड़ाव प्रथम तेहि भरई। पुनि नृप नयन किरीटन्हि परई।।
सुनु खगपति अस समुझि प्रसंगा। बुध नहिं करहिं अधम कर संगा।।
कवि कोविद गावहिं असि नीती। खल सन कलह न भल नहिं प्रीती।।
उदासीन नित रहिअ गोसाईं। खल परिहरिअ स्वान की नाईं।।
मैं खल हृदयँ कपट कुटिलाई। गुर हित कहइ न मोहि सोहाई।।

गुरु की अवज्ञा का फलः

दो0 एक बार हर मंदिर जपत रहेउँ सिव नाम।
गुर आयउ अभिमान तें उठि नहिं कीन्ह प्रनाम।।106(क)।।
सो दयाल नहिं कहेउ कछु उर न रोष लवलेस।
अति अघ गुर अपमानता सहि नहिं सके महेस।।106(ख)।।
मंदिर माझ भई नभ बानी। रे हतभाग्य अग्य अभिमानी।।
जद्यपि तव गुर कें नहिं क्रोधा। अति कृपाल चित सम्यक बोधा।।
तदपि साप सठ दैहउँ तोही। नीति बिरोध सोहाइ न मोही।।
जौं नहिं दंड करौं खल तोरा। भ्रष्ट होइ श्रुतिमारग मोरा।।
बैठ रहेसि अजगर इव पापी। सर्प होहि खल मल मति ब्यापी।।
महा बिटप कोटर महुँ जाई। रहु अधमाधम अधगति पाई।।

गुरु का स्वभावः

दो0 हाहाकार कीन्ह गुर दारुन सुनि सिव साप।
कंपित मोहि बिलोकि अति उर उपजा परिताप।।107(क)।।

करि दंडवत सप्रेम द्विज सिव सन्मुख कर जोरि।
बिनय करत गदगद स्वर समुझि घोर गति मोरि।।107(ख)।।
जौं प्रसन्न प्रभु मो पर नाथ दीन पर नेहु।
निज पद भगति देइ प्रभु पुनि दूसर बर देहु।।108(ख)।।
तव माया बस जीव जड़ संतत फिरइ भुलान।
तेहि पर क्रोध न करिअ प्रभु कृपा सिंधु भगवान।।108(ग)।।

प्रार्थना का फल

जदपि कीन्ह एहिं दारुन पापा। मैं पुनि दीन्ह कोप करि सापा।।
तदपि तुम्हार साधुता देखी। करिहउँ एहि पर कृपा बिसेषी।।

विप्र का स्वाभावः

छमासील जे पर उपकारी। ते द्विज मोहि प्रिय जथा खरारी।।
सुनु मम बचन सत्य अब भाई। हरितोषन ब्रत द्विज सेवकाई।।
अब जनि करहि बिप्र अपमाना। जानेहु संत अनंत समाना।।
इंद्र कुलिस मम सूल बिसाला। कालदंड हरि चक्र कराला।।
जो इन्ह कर मारा नहिं मरई। बिप्रद्रोह पावक सो जरई।।
अस बिबेक राखेहु मन माहीं। तुम्ह कहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं।।
औरउ एक आसिषा मोरी। अप्रतिहत गति होइहि तोरी।।
दो0 सुनि सिव बचन हरषि गुर एवमस्तु इति भाषि।
मोहि प्रबोधि गयउ गृह संभु चरन उर राखि।।109(क)।।

विवेक की बातेंः

सुनु प्रभु बहुत अवग्या किएँ। उपज क्रोध ग्यानिन्ह के हिएँ।।
अति संघरषन जौं कर कोई। अनल प्रगट चंदन ते होई।।
क्रोध कि द्वेतबुद्धि बिनु द्वैत कि बिनु अग्यान।
मायाबस परिछिन्न जड़ जीव कि ईस समान।।111(ख)।।
कबहुँ कि दुख सब कर हित ताकें। तेहि कि दरिद्र परस मनि जाकें।।
परद्रोही की होहिं निसंका। कामी पुनि कि रहहिं अकलंका।।
बंस कि रह द्विज अनहित कीन्हें। कर्म कि होहिं स्वरूपहि चीन्हें।।
काहू सुमति कि खल सँग जामी। सुभ गति पाव कि परत्रिय गामी।।
भव कि परहिं परमात्मा बिंदक। सुखी कि होहिं कबहुँ हरिनिंदक।।
राजु कि रहइ नीति बिनु जानें। अघ कि रहहिं हरिचरित बखानें।।
पावन जस कि पुन्य बिनु होई। बिनु अघ अजस कि पावइ कोई।।
लाभु कि किछु हरि भगति समाना। जेहि गावहिं श्रुति संत पुराना।।
हानि कि जग एहि सम किछु भाई। भजिअ न रामहि नर तनु पाई।।

अघ कि पिसुनता सम कछु आना। धर्म कि दया सरिस हरिजाना।।
नर तन सम नहिं कवनिउ देही। जीव चराचर जाचत तेही।।
नरक स्वर्ग अपबर्ग निसेनी। ग्यान बिराग भगति सुभ देनी।।
सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर। होहिं बिषय रत मंद मंद तर।।
काँच किरिच बदलें ते लेही। कर ते डारि परस मनि देहीं।।
नहिं दरिद्र सम दुख जग माहीं। संत मिलन सम सुख जग नाहीं।।
पर उपकार बचन मन काया। संत सहज सुभाउ खगराया।।
संत सहहिं दुख परहित लागी। परदुख हेतु असंत अभागी।।
भूर्ज तरू सम संत कृपाला। परहित निति सह बिपति बिसाला।।
सन इव खल पर बंधन करई। खाल कढ़ाइ बिपति सहि मरई।।
खल बिनु स्वारथ पर अपकारी। अहि मूषक इव सुनु उरगारी।।
पर संपदा बिनासि नसाहीं। जिमि ससि हति हिम उपल बिलाहीं।।
दुष्ट उदय जग आरति हेतू। जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू।।
संत उदय संतत सुखकारी। बिस्व सुखद जिमि इंदु तमारी।।
परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा। पर निंदा सम अघ न गिरीसा।।
हर गुर निंदक दादुर होई। जन्म सहस्त्र पाव तन सोई।।
द्विज निंदक बहु नरक भोग करि। जग जनमइ बायस सरीर धरि।।
सुर श्रुति निंदक जे अभिमानी। रौरव नरक परहिं ते प्रानी।।
होहिं उलूक संत निंदा रत। मोह निसा प्रिय ग्यान भानु गत।।
सब के निंदा जे जड़ करहीं। ते चमगादुर होइ अवतरहीं।।
सुनहु तात अब मानस रोगा। जिन्ह ते दुख पावहिं सब लोगा।।
मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला। तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला।।
काम बात कफ लोभ अपारा। क्रोध पित्त नित छाती जारा।।
प्रीति करहिं जौं तीनिउ भाई। उपजइ सन्यपात दुखदाई।।
बिषय मनोरथ दुर्गम नाना। ते सब सूल नाम को जाना।।
ममता दादु कंडु इरषाई। हरष बिषाद गरह बहुताई।।
पर सुख देखि जरनि सोइ छई। कुष्ट दुष्टता मन कुटिलई।।
अहंकार अति दुखद डमरुआ। दंभ कपट मद मान नेहरुआ।।
तृस्ना उदरबृद्धि अति भारी। त्रिबिध ईषना तरुन तिजारी।।
जुग बिधि ज्वर मत्सर अबिबेका। कहँ लागि कहौं कुरोग अनेका।।

दो0 एक ब्याधि बस नर मरहिं ए असाधि बहु ब्याधि।
पीड़हिं संतत जीव कहुँ सो किमि लहै समाधि।।121(क)।।

नेम धर्म आचार तप ग्यान जग्य जप दान।
भेषज पुनि कोटिन्ह नहिं रोग जाहिं हरिजान।।121(ख)।।

एहि बिधि सकल जीव जग रोगी। सोक हरष भय प्रीति बियोगी।।
मानस रोग कछुक मैं गाए। हहिं सब कें लखि बिरलेन्ह पाए।।
जाने ते छीजहिं कछु पापी। नास न पावहिं जन परितापी।।
बिषय कुपथ्य पाइ अंकुरे। मुनिहु हृदयँ का नर बापुरे।।

भवरोग की औषधिः

राम कृपाँ नासहि सब रोगा। जौं एहि भाँति बनै संयोगा।।
सदगुर बैद बचन बिस्वासा। संजम यह न बिषय कै आसा।।
सत संगति दुर्लभ संसारा। निमिष दंड भरि एकउ बारा।।
संत बिटप सरिता गिरि धरनी। पर हित हेतु सबन्ह कै करनी।।
संत हृदय नवनीत समाना। कहा कबिन्ह परि कहै न जाना।।
निज परिताप द्रवइ नवनीता। पर दुख द्रवहिं संत सुपुनीता।।
धन्य देस सो जहँ सुरसरी। धन्य नारि पतिब्रत अनुसरी।।
धन्य सो भूपु नीति जो करई। धन्य सो द्विज निज धर्म न टरई।।
सो धन धन्य प्रथम गति जाकी। धन्य पुन्य रत मति सोइ पाकी।।
धन्य घरी सोइ जब सतसंगा। धन्य जन्म द्विज भगति अभंगा।।

पुण्यं पापहरं सदा शिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं
मायामोहमलापहं सुविमलं प्रेमाम्बुपूरं शुभम्।
श्रीमद्रामचरित्रमानसमिदं भक्त्यावगाहन्ति ये
ते संसारपतङ्गघोरकिरणैर्दह्यन्ति नो मानवाः।।2।।

शङ्करः शन्तनोतु नः

******